वैज्ञानिक समाजवाद माला

कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र

प्रगति प्रकाशन • मास्को

वैज्ञानिक समाजवाद माला

कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र

Karl Marx

F Engels

दुनिया के मजदूरो, एक हो!

कार्ल मार्क्स
फ़्रेडरिक एंगेल्स

कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र

प्रगति प्रकाशन
मास्को

प्रकाशक की ओर से

"कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र" के प्रस्तुत हिन्दी संस्करण में १८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण तथा १८९० के जर्मन संस्करण के लिये एंगेल्स द्वारा लिखे गये नोट्स तथा विभिन्न संस्करणों के लिये लेखक द्वारा लिखी गयी भूमिकाएं शामिल की गयी हैं।

सोवियत संघ में मुद्रित

МЭ 10101—135 / 014(01)—75 без объявления

अनुक्रम

१८७२ के जर्मन संस्करण की भूमिका ९
१८८२ के दूसरे रूसी संस्करण की भूमिका ११
१८८३ के जर्मन संस्करण की भूमिका १३
१८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण की भूमिका १५
१८९० के जर्मन संस्करण की भूमिका २२
१८९२ के पोलिश संस्करण की भूमिका २९
१८९३ के इतालवी संस्करण की भूमिका ३१

कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र

१. पूंजीपति और सर्वहारा ३५
२. सर्वहारा और कम्युनिस्ट ५२
३. समाजवादी और कम्युनिस्ट साहित्य ६४
१. प्रतिक्रियावादी समाजवाद ६४
क) सामन्ती समाजवाद ६४
ख) निम्न-पूंजीवादी समाजवाद ६६
ग) जर्मन, या "सच्चा" समाजवाद ६८
२. दक़ियानूसी, या पूंजीवादी समाजवाद ७२
३. आलोचनात्मक-कल्पनावादी समाजवाद और कम्युनिज़्म . . . ७३
४. विभिन्न विरोधी पार्टियों के सम्बन्ध में कम्युनिस्टों की स्थिति . ७८
कम्युनिज़्म के सिद्धान्त ८१
टिप्पणियां १०६

"इस कृति में मेधापूर्ण सुस्पष्टता तथा भव्यता के साथ एक नये विश्वदृष्टिकोण, सुसंगत भौतिकवाद की रूपरेखा खींची गयी है जो अपनी परिधि में सामाजिक जीवन के क्षेत्र, विकास के सबसे व्यापक तथा गहन सिद्धान्त के रूप में द्वन्द्ववाद, वर्ग संघर्ष और एक नये, कम्युनिस्ट समाज के सृष्टा, सर्वहारा वर्ग की विश्व-ऐतिहासिक क्रान्तिकारी भूमिका का सिद्धान्त भी ले आता है।"

लेनिन

१८७२ के जर्मन संस्करण की भूमिका

कम्युनिस्ट लीग नामक मजदूरों के अन्तर्राष्ट्रीय संघ ने, जो उस ज़माने की हालतों में एक गुप्त संघ ही हो सकता था, १८४७ के नवम्बर में लन्दन में हुई अपनी कांग्रेस में हम दोनों को यह काम सौंपा कि हम पार्टी का एक विस्तृत सैद्धांतिक और व्यावहारिक कार्यक्रम प्रकाशनार्थ तैयार करें। यही निम्नलिखित "घोषणापत्र" के जन्म की कहानी है, जिसकी पाण्डुलिपि फ़रवरी क्रान्ति[1] से कुछ ही सप्ताह पहले छपने के लिए लन्दन भेजी गयी थी। वह सबसे पहले जर्मन भाषा में छपी, और उसके वाद इसके कम से कम वारह भिन्न-भिन्न संस्करण जर्मनी, इंगलैंड और अमरीका में प्रकाशित हुए। अंग्रेज़ी में सबसे पहले यह १८५० में *«Red Republican»* पत्रिका में लन्दन में प्रकाशित हुआ, अनुवाद मिस हेलेन मैकफ़र्लेन ने किया था और १८७१ में इसके कम से कम तीन भिन्न-भिन्न अनुवाद अमरीका में प्रकाशित हुए। इसका फ़्रांसीसी अनुवाद पहले पहल पेरिस में १८४८ के जून विद्रोह[2] के कुछ ही पहले निकला था और हाल में वह न्यूयार्क के *«Le Socialiste»* में फिर प्रकाशित हुआ है। आजकल एक नया अनुवाद भी तैयार हो रहा है। जर्मन भाषा में पहली वार निकलने के कुछ ही समय बाद इसका एक पोलिश अनुवाद भी लन्दन में प्रकाशित हुआ। सातवें दशक में जेनेवा में एक रूसी अनुवाद निकला। प्रथम प्रकाशन के थोड़े ही समय बाद डेनिश भाषा में भी इसका अनुवाद हुआ था।

पिछले पचीस वर्षों में परिस्थिति चाहे कितनी भी वदल गयी हो, इस "घोषणापत्र" में निरूपित आम सिद्धांत समग्र रूप में आज भी उतने ही सही हैं, जितने कि पहले थे। एकाध जगह उसमें छोटा-मोटा सुधार

किया जा सकता है। सिद्धांतों का क्रियान्वयन, जैसा कि ख़ुद "घोषणापत्र" में कहा गया है, हर जगह और हमेशा विद्यमान ऐतिहासिक परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और इसी कारण अध्याय २ के अन्त में प्रस्तावित क्रान्तिकारी कार्रवाइयों पर कोई विशेष ज़ोर नहीं दिया गया। आज यह भाग वहुत अंशों में अत्यंत भिन्न रूप में लिखा जाता। आधुनिक उद्योग की पिछले पचीस वर्षों की ज़वर्दस्त तरक़्क़ी और उसके साथ होनेवाली मज़दूर वर्ग के पार्टी संगठन की उन्नति और विस्तार को देखते हुए; फ़रवरी क्रान्ति में और उसके वाद उससे भी ज़्यादा पेरिस कम्यून[3] में, जिसमें पहली वार सर्वहारा के हाथ में पूरे दो महीने तक राजनीतिक सत्ता रही, प्राप्त व्यावहारिक अनुभव को देखते हुए इस कार्यक्रम की कुछ तफ़सीलें पुरानी पड़ गयी हैं। कम्यून ने एक वात तो ख़ास तौर से सावित कर दी, वह यह कि "मज़दूर वर्ग राज्य की वनी-वनायी मशीनरी पर क़ब्ज़ा करके ही उसका उपयोग अपने उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिए नहीं कर सकता।" (देखिये "फ़्रांस में गृह-युद्ध। अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ की जनरल कौंसिल की चिट्ठी", जर्मन संस्करण, पृष्ठ १९, जहां इस वात की और विस्तृत विवेचना की गयी है।) फिर यह स्वतःस्पष्ट है कि इसमें दी हुई समाजवादी साहित्य की आलोचना भी आज की दृष्टि से अपूर्ण है, क्योंकि उसमें १८४७ तक का ही ज़िक्र है। इसके अलावा विभिन्न विरोधी पार्टियों के साथ कम्युनिस्टों के संवंध के वारे में जो टिप्पणियां की गयी हैं (अध्याय ४), वे यद्यपि सैद्धांतिक रूप से अव भी सही हैं, तथापि व्यवहार में पुरानी पड़ गयी हैं, क्योंकि तव से राजनीतिक परिस्थिति विलकुल ही वदल गयी है, और जिन राजनीतिक पार्टियों का वहां उल्लेख किया गया है, उनमें से अधिकांश इतिहास की धारा में विलीन हो चुकी हैं।

लेकिन "घोषणापत्र" तो एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ वन गया है जिसमें परिवर्तन करने का हमें कोई अधिकार नहीं रह गया है। हो सकता है कि आगे के एक संस्करण में भूमिका द्वारा १८४७ से आज तक के समय के व्यवधान को दूर किया जा सके। प्रस्तुत संस्करण तो इतना अप्रत्याशित था कि हमें इस काम के लिए समय ही नहीं मिला।

कार्ल मार्क्स। फ़्रेडरिक एंगेल्स

लंदन, २४ जून, १८७२

१८८२ के दूसरे रूसी संस्करण की भूमिका

"कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र" का, जिसका अनुवाद बकूनिन ने किया था, प्रथम रूसी संस्करण सातवें दशक[4] के आरम्भ में "कोलोकोल"[5] के मुद्रण कार्यालय ने प्रकाशित किया था। उस समय पश्चिम "घोषणापत्र" के रूसी संस्करण में केवल साहित्यिक अनोखापन ही देख सकता था। परन्तु अब इस तरह का दृष्टिकोण असम्भव है।

उस समय (दिसम्बर, १८४७) सर्वहारा आन्दोलन का कितना सीमित क्षेत्र था, उसे घोषणापत्र का आख़िरी अध्याय – विभिन्न देशों में विभिन्न विरोधी पार्टियों के सम्बन्ध में कम्युनिस्टों की स्थिति – सर्वाधिक स्पष्टता के साथ प्रदर्शित कर देता है। इसमें ठीक रूस तथा संयुक्त राज्य अमरीका ग़ायब हैं। यह वह ज़माना था जब रूस सारे यूरोपीय प्रतिक्रियावाद की आख़िरी बड़ी आरक्षित शक्ति था, जब अमरीका ने आप्रवासन के माध्यम से यूरोप की सारी बेशी सर्वहारा शक्तियों को अपने अन्दर खपा लिया था। दोनों देश यूरोप को कच्ची सामग्रियां मुहैया कर रहे थे और साथ ही वे उसके औद्योगिक माल की खपत की मंडियां भी थे। उस समय दोनों इस या उस रूप में विद्यमान यूरोपीय व्यवस्था के आधार-स्तम्भ थे।

आज स्थिति कितनी बदल चुकी है! ठीक यही यूरोपीय आप्रवासन अथाह कृषि उत्पादन के लिए उत्तरी अमरीका के वास्ते उपयुक्त सिद्ध हुआ, जिसके साथ होड़ आज छोटे-बड़े सारे यूरोपीय भू-स्वामित्व की नींवों को ही हिला रही है। इसके अलावा उसने अमरीका को अपने विपुल औद्योगिक संसाधन इतनी स्फूर्ति के साथ तथा इतने बड़े पैमाने पर अपने लाभार्थ उपयोग में लाने में सक्षम बनाया कि उससे पश्चिमी यूरोप और ख़ास तौर पर इंगलैण्ड की अब तक मौजूद इजारेदारी की जल्द ही कमर

टूट जायेगी। दोनों परिस्थितियों का स्वयं अमरीका पर क्रान्तिकारी ढंग से प्रभाव पड़ रहा है। किसानों का लघु तथा मध्यम दर्जे का भू-स्वामित्व, जो पूरी राजनीतिक संरचना का आधार है, क़दम-ब-क़दम विराट फ़ार्मों के साथ होड़ में ढहता जा रहा है; इसके साथ ही औद्योगिक क्षेत्रों में पहली बार बहुत बड़ी संख्या वाले सर्वहारा वर्ग का तथा पूंजियों के कल्पनातीत संकेंद्रण का विकास हो रहा है।

और अब रूस! १८४८–१८४९ की क्रान्ति के दौरान यूरोपीय राजाओं ने ही नहीं, वरन यूरोपीय पूंजीपतियों ने भी सर्वहारा वर्ग से, जो अभी जाग ही रहा था, अपनी मुक्ति मात्र रूसी हस्तक्षेप में पायी। ज़ार को यूरोपीय प्रतिक्रियावाद का सरदार घोषित कर दिया गया। आज वह गातचिना में क्रान्ति का युद्धबन्दी है[6] और रूस यूरोप में क्रान्तिकारी कार्य-कलाप का हरावल है।

"कम्युनिस्ट घोषणापत्र" ने आधुनिक पूंजीवादी स्वामित्व के अवश्यम्भावी आसन्न विघटन की उद्घोषणा को अपना लक्ष्य बनाया था। परन्तु रूस में हम तेज़ी से विकसित हो रही पूंजीवादी ठगी तथा पूंजीवादी भू-स्वामित्व के, जिसने अभी-अभी विकसित होना आरम्भ किया है, साथ ही आधी से अधिक ऐसी भूमि पाते हैं जिस पर किसानों का समान स्वामित्व है। सवाल यह है—क्या रूसी ग्राम समुदाय जो बुरी तरह अन्तर्ध्वस्त होते हुए भी भूमि के आदिकालीन समान स्वामित्व का रूप है, सीधे कम्युनिस्ट ढंग के समान स्वामित्व के उच्चतर रूप में प्रवेश कर सकता है? या इसके विपरीत उसे भी क्या विघटन की उसी प्रक्रिया के बीच से गुज़रना पड़ेगा जो पश्चिम के ऐतिहासिक विकासक्रम के लिए लाक्षणिक है?

इस समय इस प्रश्न का एकमात्र उत्तर यह है—यदि रूसी क्रान्ति पश्चिम में सर्वहारा क्रान्ति के लिए इस तरह का संकेत बन जाये कि वे दोनों एक दूसरे के परिपूरक बन सकें तो भूमि का वर्तमान रूसी सामुदायिक स्वामित्व कम्युनिस्ट विकास के लिए प्रस्थान-बिन्दु बन सकता है।

कार्ल मार्क्स। फ़्रेडरिक एंगेल्स

लंदन, २१ जनवरी, १८८२

१८८३ के जर्मन संस्करण की भूमिका

खेद है कि वर्त्तमान संस्करण की भूमिका पर मुझे अकेले हस्ताक्षर करने पड़ रहे हैं। मार्क्स, जिनका यूरोप तथा अमरीका का सारा मज़दूर वर्ग इतना ऋणी है जितना किसी और का नहीं है, हाइगेट समाधि-स्थली में विश्राम कर रहे हैं और उनकी समाधि के ऊपर घास के पहले पौधे बढ़ने भी लगे हैं। उनकी मृत्यु के बाद "घोषणापत्र" को संशोधित करने अथवा अनुपूरित करने की बात तो और भी नहीं सोची जा सकती। इसलिए मैं यहां फिर निम्नलिखित बात स्पष्ट रूप से कहना ज़रूरी मानता हूं।

"घोषणापत्र" में शुरू से लेकर आख़िर तक विद्यमान मूल चिन्तन, यह चिन्तन विशुद्ध रूप से मार्क्स का है कि प्रत्येक ऐतिहासिक युग का आर्थिक उत्पादन तथा उससे अनिवार्यतः उत्पन्न होनेवाला सामाजिक ढांचा उस युग के राजनीतिक तथा बौद्धिक इतिहास की आधार-शिला हुआ करते हैं; कि इसके परिणामस्वरूप (भूमि के आदिम सामुदायिक स्वामित्व के विघटन के बाद से) पूरा इतिहास निरन्तर सामाजिक विकास की भिन्न-भिन्न मंज़िलों में वर्ग संघर्षों, शोषितों तथा शोषकों के बीच, शासितों तथा शासकों के बीच संघर्षों का इतिहास रहा है; कि यह संघर्ष अब उस मंज़िल में पहुंच चुका है जहां शोषित तथा उत्पीड़ित वर्ग (सर्वहारा वर्ग) पूरे समाज को शोषण, उत्पीड़न तथा वर्ग संघर्ष से सदा-सर्वदा के लिए

मुक्त किये बिना उत्पीड़न तथा शोषण करनेवाले वर्ग (पूंजीपति वर्ग) से अपने को मुक्त नहीं कर सकता।*

मैं यह बात पहले भी कई बार कह चुका हूं; परन्तु ठीक इस समय यह ज़रूरी है कि यह भी स्वयं "घोषणापत्र" के प्राक्कथन के रूप में मौजूद रहे।

फ़्रेडरिक एंगेल्स

लन्दन, २८ जून, १८८३

---

*मैंने अंग्रेज़ी अनुवाद की भूमिका में लिखा था, "इस प्रस्थापना की ओर, जो मेरी राय में इतिहास के लिए अवश्यम्भावी रूप से वही करने जा रही है जो डारविन[7] के सिद्धान्त ने जीव-विज्ञान के लिए किया है, हम दोनों १८४५ से पहले कुछ सालों तक धीरे-धीरे बढ़ते रहे। मैं उसकी ओर स्वतंत्र रूप से कहां तक बढ़ सका, इसे "इंगलैंड में मज़दूर वर्ग की दशा" नामक मेरी रचना सर्वोत्तम ढंग से प्रदर्शित कर देती है। परन्तु जब मैं १८४५ के वसन्त में मार्क्स से पुनः ब्रसेल्स में मिला तो इस विचार को वह पहले ही विकसित कर बैठे थे और उसे उन्होंने मेरे सामने जिस रूप में प्रस्तुत किया, वह प्रायः उतना ही स्पष्ट था जितने स्पष्ट रूप में उसे मैंने यहां बयान किया है।" (१८९० के जर्मन संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

१८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण की भूमिका

"घोषणापत्र" कम्युनिस्ट लीग के, मज़दूर संघ के कार्यक्रम के रूप में प्रकाशित किया गया था। यह लीग आरम्भ में विशुद्ध रूप में जर्मन, आगे चलकर अन्तर्राष्ट्रीय तथा १८४८ तक महाद्वीप की राजनीतिक परिस्थितियों के कारण अपरिहार्य रूप से एक गुप्त संस्था थी। नवम्बर १८४७ में लन्दन में लीग की कांग्रेस में मार्क्स तथा एंगेल्स को एक विस्तृत सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पार्टी कार्यक्रम प्रकाशनार्थ तैयार करने का कार्य सौंपा गया। पाण्डुलिपि जनवरी १८४८ में तैयार हो गयी थी तथा उसे २४ फ़रवरी की फ़ांसीसी क्रान्ति[8] से कुछ ही दिन पहले लन्दन में प्रकाशक के पास भेजा गया था। उसका फ़ांसीसी अनुवाद पेरिस में १८४८ के जून विद्रोह के कुछ ही पहले प्रकाशित किया गया था। पहला अंग्रेज़ी अनुवाद, जो मिस हेलेन मैकफ़र्लेन ने किया था, १८५० में लन्दन में जार्ज जूलियन हार्नें के *«Red Republican»* में प्रकाशित हुआ था। डेनिश तथा पोलिश संस्करण भी प्रकाशित हुए।

जून १८४८ के पेरिस विद्रोह—सर्वहारा वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग के मध्य पहली बड़ी लड़ाई—की पराजय ने यूरोपीय मज़दूर वर्ग की सामाजिक तथा राजनीतिक आकांक्षाओं को फिर से पार्श्वभूमि में ढकेल दिया। तब से सत्ता के लिये संघर्ष फ़रवरी क्रान्ति की ही तरह फिर से केवल सम्पत्तिधारी वर्गों के भिन्न-भिन्न भागों के बीच ही होता रहा। मज़दूर वर्ग को राजनीतिक कार्रवाइयां करने की आज़ादी पाने के लिए संघर्ष करने तथा मध्य वर्गीय उग्रवादियों के सबसे उग्र भाग की स्थिति में पहुंचा दिया गया। जहां कहीं स्वतंत्र सर्वहारा आन्दोलनों ने जीवन के लक्षण प्रकट

करना जारी रखा, वहां उनका निर्ममतापूर्वक पीछा किया गया। इस प्रकार प्रशियाई पुलिस ने कम्युनिस्ट लीग की केन्द्रीय समिति के कार्यालय पर, जो उस समय कोलोन में था, छापा मारा। सदस्य गिरफ़्तार किये गये और १८ माह तक वन्दी रखने के वाद उन पर अक्तूवर १८५२ को मुक़दमा चलाया गया। यह मशहूर "कोलोन में कम्युनिस्टों पर मुक़दमा" ४ अक्तूवर से १२ नवम्बर तक चलता रहा; सात वन्दियों को तीन साल से लेकर छः साल तक दुर्गकारावास की सज़ा दी गयी। सज़ा सुनाये जाने के फ़ौरन वाद वाक़ी सदस्यों ने लीग को औपचारिक रूप से भंग कर दिया। जहां तक "घोषणापत्र" का सम्बन्ध था, ऐसे प्रतीत हुआ कि उसके भाग्य में विस्मृति के गर्त्त में पहुंचना लिखा हुआ है।

जव यूरोप के मज़दूर वर्ग ने शासक वर्गों पर एक और प्रहार करने के लिये पर्याप्त शक्ति फिर से संचित कर ली, तो अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ का जन्म हुआ। परन्तु यह संघ, जो यूरोप तथा अमरीका के सारे संघर्षशील सर्वहारा वर्ग को एकजुट करने के निश्चित उद्देश्य से बनाया गया था, "घोषणापत्र" में निरूपित सिद्धान्तों की तत्काल घोषणा नहीं कर सकता था। इंटरनेशनल के लिए ऐसा व्यापक कार्यक्रम वनाना अनिवार्य था जो इंगलैंड की ट्रेड-यूनियनों, फ़्रांस, वेल्जियम, इटली तथा स्पेन में प्रूदों[9] के अनुयायियों तथा जर्मनी में लासालपंथियों[10]* को स्वीकार्य हो सके। सव पार्टियों के लिए सन्तोषजनक यह कार्यक्रम लिखते हुए मार्क्स ने मज़दूर वर्ग के बौद्धिक विकास पर, जो संयुक्त कार्यकलाप तथा पारस्परिक विचार-विमर्श के फलस्वरूप निश्चित रूप से पैदा होता, पूर्णतया भरोसा किया। स्वयं घटनाएं तथा पूंजी के विरुद्ध संघर्ष के वरावर उतार-चढ़ाव—विजयों से ज़्यादा पराजयें—मज़दूरों के दिमाग़ में यह बात विठाये विना नहीं रह सकते थे कि उनके विभिन्न प्रिय नीम-हकीमी नुस्खे

---

*ख़ुद लासाल हमसे हमेशा यही कहते थे कि वह मार्क्स के शिष्य हैं और ऐसा होने के नाते वह "घोषणापत्र" को आधार के रूप में ग्रहण करते थे। परन्तु १८६२–१८६४ के अपने सार्वजनिक आन्दोलन में वह कभी राजकीय ऋणों से समर्थित सहकारी वर्कशापों की मांग से आगे नहीं बढ़े। (एंगेल्स का नोट।)

अपर्याप्त हैं, और वे मज़दूर वर्ग की मुक्ति की वास्तविक शर्तों को पूरी तरह समझने का रास्ता प्रशस्त किये बिना नहीं रह सकते थे। और मार्क्स सही सिद्ध हुए। १८७४ में जब इंटरनेशनल भंग हो गया, तो उस समय का मज़दूर वर्ग, १८६४ की तुलना में, जब उसकी स्थापना हुई थी, एकदम भिन्न था। फ़्रांस में प्रूदोंपंथ तथा जर्मनी में लासालपंथ दम तोड़ रहे थे, और दक़ियानूसी ब्रिटिश ट्रेड-यूनियनें तक—हालांकि उनमें से अधिकांश इंटरनेशनल से अपना नाता बहुत पहले ही तोड़ चुकी थीं—धीरे-धीरे उस बिन्दु पर पहुंच रही थीं जहां पिछले वर्ष स्वांसी कांग्रेस में उनके अध्यक्ष उनके नाम पर यह एलान कर सके कि "महाद्वीपीय समाजवाद हमारे लिए आतंक नहीं रह गया है"। वस्तुतः "घोषणापत्र" के सिद्धान्त सभी देशों के मज़दूरों के बीच काफ़ी प्रचलित हो चुके थे।

इस प्रकार "घोषणापत्र" स्वयं फिर सामने आया। जर्मन मूलपाठ १८५० से कई बार स्विट्ज़रलैंड, इंगलैंड तथा अमरीका में छप चुका था। १८७२ में वह न्यूयार्क में अंग्रेज़ी में अनूदित हुआ और «*Woodhull and Claflin's Weekly*» में प्रकाशित हुआ था। इस अंग्रेज़ी संस्करण का एक फ़्रांसीसी अनुवाद न्यूयार्क के «*Le Socialiste*» में प्रकाशित हुआ। तब से न्यूनाधिक विकृत दो अंग्रेज़ी अनुवाद अमरीका में प्रकाशित हुए हैं तथा उनमें से एक का ब्रिटेन में पुनर्मुद्रण हुआ है। पहला रूसी अनुवाद, जो बकूनिन ने किया था, जेनेवा में लगभग १८६३ में हर्ज़ेन के "कोलोकोल" कार्यालय ने प्रकाशित किया था; दूसरा अनुवाद भी, जो वीरांगना वेरा ज़ासूलिच ने किया था, १८८२ में जेनेवा में प्रकाशित हुआ। एक नया डेनिश संस्करण कोपेनहेगेन के «*Social-demokratisk Bibliothek*» में १८८५ में छपा; एक नया फ़्रांसीसी अनुवाद १८८५ में «*Le Socialiste*» में छपा है। इस फ़्रांसीसी अनुवाद का स्पेनी भाषा में रूपान्तरण किया गया जो माड्रिड में १८८६ में छपा। जर्मन पुनर्मुद्रणों की बात करने की आवश्यकता नहीं है, उनकी संख्या कम से कम बारह है। मुझे बताया गया है कि आर्मीनियाई भाषा में हुआ अनुवाद, जिसे कुस्तुनतुनिया में छपना था, इसलिए प्रकाशित नहीं हो सका कि प्रकाशक मार्क्स के नाम से पुस्तक छापने से डरता था जबकि

अनुवादक ने उसे अपना काम बताने से इन्कार कर दिया। मैंने अन्य भाषाओं में अनुवादों की बात सुनी है परन्तु उन्हें देखा नहीं है। इस प्रकार "घोषणापत्र" का इतिहास काफ़ी हद तक आधुनिक मज़दूर आन्दोलन का इतिहास प्रतिबिम्बित करता है; इस समय वह निस्सन्देह सबसे व्यापक, पूरे समाजवादी साहित्य में सबसे अधिक अन्तर्राष्ट्रीय कृतित्व है, साइबेरिया से लेकर कैलिफ़ोर्निया तक लाखों-लाख मेहनतकश लोगों का समान कार्यक्रम है।

फिर भी जब हमने उसे लिखा था, हम उसे समाजवादी घोषणापत्र नहीं कह सकते थे। १८४७ में दो तरह के लोग समाजवादी माने जाते थे; एक ओर विभिन्न कल्पनावादी पद्धतियों के अनुयायी – इंगलैंड में ओवेनपंथी[11] और फ़्रांस में फ़ूरियेपंथी[12], ये दोनों मात्र मरणासन्न संकीर्ण पंथ बनकर रह गये थे; दूसरी ओर थे नाना प्रकार के सामाजिक नीम-हकीम, जो पूंजी तथा मुनाफ़े को ज़रा भी क्षति पहुंचाये बिना, सब तरह की टांकासाज़ी के बल पर सब क़िस्म की सामाजिक बुराइयों का अन्त कर देना चाहते थे। ये दोनों ही तरह के लोग मज़दूर आन्दोलन के बाहर थे तथा समर्थन के लिए "शिक्षित" वर्गों पर आस लगाये बैठे रहते थे। मज़दूर वर्ग के जिस हिस्से को यह पूरा विश्वास हो चुका था कि मात्र राजनीतिक क्रान्तियां पर्याप्त नहीं हैं तथा जो समाज के आमूल पुनर्निर्माण की मांग करता था, वह उस समय अपने को कम्युनिस्ट कहता था। यह भोंडा, बेडौल, विशुद्ध रूप से सहज प्रेरणात्मक क़िस्म का कम्युनिज़्म था; फिर भी उसने आधारभूत बिन्दु को स्पर्श किया तथा उसमें इतनी शक्ति थी कि उसने काल्पनिक कम्युनिज़्म को जन्म दिया – फ़्रांस में काबे के तथा जर्मनी में वाइटलिंग के कल्पनावादी कम्युनिज़्म[13] को। इस प्रकार १८४७ में समाजवाद पूंजीवादी आन्दोलन तथा कम्युनिज़्म मज़दूर वर्ग का आन्दोलन था। कम से कम महाद्वीप में समाजवाद "प्रतिष्ठाप्राप्त" था जबकि कम्युनिज़्म इसके ठीक विपरीत। और चूंकि हमारी उस समय ही यह पक्की राय बन चुकी थी कि "मज़दूर वर्ग की मुक्ति स्वयं मज़दूर वर्ग का कार्य ही हो सकता है", इसलिए इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं थी कि हमें इन दोनों में से कौनसा नाम अपनाना चाहिए था। और न तब से इस नाम का त्याग करने का हमें कभी ख़्याल ही हुआ है।

चूंकि "घोषणापत्र" हमारी संयुक्त रचना है, इस लिए मैं यह कहने के लिए अपने को वचनबद्ध समझता हूं कि इसमें आधारभूत प्रस्थापना, जो इसका नाभिक है, मार्क्स की ही है। वह प्रस्थापना यह है कि प्रत्येक ऐतिहासिक युग का आर्थिक उत्पादन तथा विनिमय का प्रचलित ढंग तथा उससे अनिवार्यतः उत्पन्न होनेवाली सामाजिक संरचना उस आधार का निर्माण करती है जिस पर उस युग के राजनीतिक तथा बौद्धिक इतिहास का निर्माण होता है और जिसके बल पर ही उस पर प्रकाश डाला जा सकता है; कि इसके परिणामस्वरूप मानवजाति का पूरा इतिहास (आदिम क़बायली समाज के, जिसमें भूमि पर सब का स्वामित्व होता था, विघटन से लेकर) वर्ग संघर्षों, शोषकों तथा शोषितों, शासकों तथा शासितों के बीच संघर्षों का इतिहास रहा है; कि इन वर्ग संघर्षों का इतिहास अपने विकासक्रम की एक ऐसी मंज़िल में पहुंच चुका है जहां शोषित तथा उत्पीड़ित वर्ग – सर्वहारा वर्ग – पूरे समाज को शोषण, उत्पीड़न, वर्ग विभेदों तथा वर्ग संघर्षों से सदा-सर्वदा के लिए मुक्त किये बिना उत्पीड़न तथा शोषण करनेवाले वर्ग – पूंजीपति वर्ग – के जूए से अपने को मुक्त नहीं कर सकता।

इस प्रस्थापना की ओर, जो मेरी राय में इतिहास के लिए अवश्यम्भावी रूप से वही करने जा रही है जो डारविन[14] के सिद्धान्त ने जीव-विज्ञान के लिए किया है, हम दोनों १८४५ से पहले कुछ सालों तक धीरे-धीरे बढ़ते रहे। मैं इसकी ओर स्वतंत्र रूप से कहां तक बढ़ सका, इसे "इंगलैंड में मज़दूर वर्ग की दशा"* नामक मेरी रचना सर्वोत्तम ढंग से प्रदर्शित कर देती है। परन्तु जब मैं १८४५ के वसन्त में मार्क्स से पुनः ब्रसेल्स में मिला तो इस विचार को वह पहले ही विकसित कर बैठे थे और उसे उन्होंने मेरे सामने जिस रूप में प्रस्तुत किया, वह प्रायः उतना ही स्पष्ट था जितने स्पष्ट रूप में उसे मैंने यहां बयान किया है।

* «The Condition of the Working Class in England in 1844». By Frederick Engels. New York, Lovell-London, W. Reeves, 1888. (एंगेल्स का नोट।)

१८७२ के जर्मन संस्करण की हमने मिलकर जो भूमिका लिखी थी, उसमें से मैं निम्नलिखित अंश उद्धृत कर रहा हूं:

"पिछले पचीस वर्षों में परिस्थिति चाहे कितनी भी बदल गयी हो, इस 'घोषणापत्र' में निरूपित आम सिद्धांत समग्र रूप में आज भी उतने ही सही हैं, जितने कि पहले थे। एकाध जगह उसमें छोटा-मोटा सुधार किया जा सकता है। सिद्धांतों का क्रियान्वयन, जैसा कि ख़ुद 'घोषणापत्र' में कहा गया है, हर जगह और हमेशा विद्यमान ऐतिहासिक परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और इसी कारण अध्याय २ के अन्त में प्रस्तावित क्रान्तिकारी कार्रवाइयों पर कोई विशेष ज़ोर नहीं दिया गया। आज यह भाग बहुत अंशों में अत्यंत भिन्न रूप में लिखा जाता। १८४८ से आधुनिक उद्योग की ज़बर्दस्त तरक़्क़ी और उसके साथ होनेवाली मज़दूर वर्ग के पार्टी संगठन की उन्नति और विस्तार को देखते हुए; फ़रवरी क्रान्ति में और उसके बाद उससे भी ज़्यादा पेरिस कम्यून[15] में, जिसमें पहली बार सर्वहारा के हाथ में पूरे दो महीने तक राजनीतिक सत्ता रही, प्राप्त व्यावहारिक अनुभव को देखते हुए इस कार्यक्रम की कुछ तफ़सीलें पुरानी पड़ गयी हैं। कम्यून ने एक बात तो ख़ास तौर से साबित कर दी, वह यह कि 'मज़दूर वर्ग राज्य की बनी-बनायी मशीनरी पर क़ब्ज़ा करके ही उसका उपयोग अपने उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिए नहीं कर सकता।' (देखिये 'फ़्रांस में गृह-युद्ध। अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ की जनरल कौंसिल की चिट्ठी', लन्दन, ट्रुएलोव, १८७१, पृष्ठ १५, जहां इस बात की और विस्तृत विवेचना की गयी है।) फिर यह स्वतःस्पष्ट है कि इसमें दी हुई समाजवादी साहित्य की आलोचना भी आज की दृष्टि से अपूर्ण है, क्योंकि उसमें १८४७ तक का ही ज़िक्र है। इसके अलावा विभिन्न विरोधी पार्टियों के साथ कम्युनिस्टों के संबंध के बारे में जो टिप्पणियां की गयी हैं (अध्याय ४), वे यद्यपि सैद्धांतिक रूप से अब भी सही हैं, तथापि व्यवहार में पुरानी पड़ गयी हैं, क्योंकि तब से राजनीतिक परिस्थिति बिलकुल ही बदल गयी है, और जिन राजनीतिक पार्टियों का वहां उल्लेख किया गया है, उनमें से अधिकांश इतिहास की धारा में विलीन हो चुकी हैं।

"लेकिन 'घोषणापत्र' तो एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ बन गया है जिसमें परिवर्तन करने का हमें कोई अधिकार नहीं रह गया है।"

प्रस्तुत अनुवाद श्री सैमुअल मूर का है, जो मार्क्स की "पूंजी" के अधिकांश के अनुवादक हैं। हमने मिलकर इसे संशोधित किया है तथा कुछ व्याख्यात्मक ऐतिहासिक टिप्पणियां जोड़ दी हैं।

फ़्रेडरिक एंगेल्स

लन्दन, ३० जनवरी, १८८८

१८६० के जर्मन संस्करण की भूमिका

उपरिलिखित पंक्तियों के लिखे जाने के वाद "घोषणापत्र" के एक नये जर्मन संस्करण का प्रकाशन ग्रावश्यक हो गया है तथा "घोषणापत्र" के साथ भी कई बातें ऐसी हो चुकी हैं, जिन्हें यहां दर्ज किया जाना चाहिए।

द्वितीय रूसी ग्रनुवाद, जो वेरा ज़ासूलिच ने किया है, जेनेवा में १८८२ में प्रकाशित हुग्रा था; उस संस्करण की भूमिका मार्क्स तथा मैंने लिखी थी। दुर्भाग्यवश मूल जर्मन पाण्डुलिपि कहीं खो गयी है, इसलिए मुझे रूसी से दुवारा ग्रनुवाद करना पड़ेगा जिससे मूलपाठ में किसी तरह का सुधार होने नहीं जा रहा है। उसमें लिखा हुग्रा है:

"'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र' का, जिसका ग्रनुवाद बकूनिन ने किया था, प्रथम रूसी संस्करण सातवें दशक के ग्रारम्भ में 'कोलोकोल' के मुद्रण कार्यालय ने प्रकाशित किया था। उस समय पश्चिम 'घोषणापत्र' के रूसी संस्करण में केवल साहित्यिक ग्रनोखापन ही देख सकता था। परन्तु ग्रब इस तरह का दृष्टिकोण ग्रसम्भव है।

"उस समय (दिसम्वर, १८४७) सर्वहारा ग्रान्दोलन का कितना सीमित क्षेत्र था, उसे घोषणापत्र का ग्राख़िरी ग्रध्याय – विभिन्न विरोधी पार्टियों के सम्बन्ध में कम्युनिस्टों की स्थिति – सर्वाधिक स्पष्टता के साथ प्रदर्शित कर देता है। इसमें ठीक रूस तथा संयुक्त राज्य ग्रमरीका ग़ायब हैं। यह वह ज़माना था जब रूस सारे यूरोपीय प्रतिक्रियावाद की ग्राख़िरी वड़ी ग्रारक्षित शक्ति था, जव ग्रमरीका ने ग्राप्रवासन के माध्यम से यूरोप की सारी बेशी सर्वहारा शक्तियों को ग्रपने ग्रन्दर खपा लिया था। दोनों

देश यूरोप को कच्ची सामग्रियां मुहैया कर रहे थे और साथ ही वे उसके औद्योगिक माल की खपत की मंडियां भी थे। उस समय दोनों इस या उस रूप में विद्यमान यूरोपीय व्यवस्था के आधार-स्तम्भ थे।

"आज स्थिति कितनी बदल चुकी है! ठीक यही यूरोपीय आप्रवासन अथाह कृषि उत्पादन के लिए उत्तरी अमरीका के वास्ते उपयुक्त सिद्ध हुआ, जिसके साथ होड़ आज छोटे-बड़े सारे यूरोपीय भू-स्वामित्व की नींवों को ही हिला रही है। इसके अलावा उसने अमरीका को अपने विपुल औद्योगिक संसाधन इतनी स्फूर्ति के साथ तथा इतने बड़े पैमाने पर अपने लाभार्थ उपयोग में लाने में सक्षम बनाया कि उससे पश्चिमी यूरोप और ख़ास तौर पर इंगलैंड की अब तक मौजूद इजारेदारी की जल्द ही कमर टूट जायेगी। दोनों परिस्थितियों का स्वयं अमरीका पर क्रान्तिकारी ढंग से प्रभाव पड़ रहा है। किसानों का लघु तथा मध्यम दर्जे का भू-स्वामित्व, जो पूरी राजनीतिक संरचना का आधार है, क़दम-ब-क़दम विराट फ़ार्मों के साथ होड़ में ढहता जा रहा ; इसके साथ ही औद्योगिक क्षेत्रों में पहली बार बहुत बड़ी संख्या वाले सर्वहारा वर्ग का तथा पूंजियों के कल्पनातीत संकेंद्रण का विकास हो रहा है।

"और अब रूस! १८४८–१८४९ की क्रान्ति के दौरान यूरोपीय राजाओं ने ही नहीं, वरन यूरोपीय पूंजीपतियों ने भी सर्वहारा वर्ग से, जो अभी जाग ही रहा था, अपनी मुक्ति मात्र रूसी हस्तक्षेप में पायी। ज़ार को यूरोपीय प्रतिक्रियावाद का सरदार घोषित कर दिया गया। आज वह गातचिना में क्रान्ति का युद्धबन्दी है और रूस यूरोप में क्रान्तिकारी कार्यकलाप का हरावल है।

"'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' ने आधुनिक पूंजीवादी स्वामित्व के अवश्यम्भावी आसन्न विघटन की उद्घोषणा को अपना लक्ष्य बनाया था। परन्तु रूस में हम तेज़ी से विकसित हो रही पूंजीवादी ठगी तथा पूंजीवादी भू-स्वामित्व के, जिसने अभी-अभी विकसित होना आरम्भ किया है, साथ ही आधी से अधिक ऐसी भूमि पाते हैं जिस पर किसानों का समान स्वामित्व है। सवाल यह है–क्या रूसी ग्राम समुदाय, जो बुरी तरह अन्तर्ध्वस्त होते हुए भी भूमि के आदिकालीन समान स्वामित्व का रूप

है, सीधे कम्युनिस्ट ढंग के समान स्वामित्व के उच्चतर रूप में प्रवेश कर सकता है? या इसके विपरीत उसे भी क्या विघटन की उसी प्रक्रिया के बीच से गुज़रना पड़ेगा जो पश्चिम के ऐतिहासिक विकासक्रम के लिए लाक्षणिक है?

"इस समय इस प्रश्न का एकमात्र उत्तर यह है—यदि रूसी क्रान्ति पश्चिम में सर्वहारा क्रान्ति के लिए इस तरह का संकेत वन जाये कि वे दोनों एक दूसरे के परिपूरक वन सकें तो भूमि का वर्तमान रूसी सामुदायिक स्वामित्व कम्युनिस्ट विकास के लिए प्रस्थान-विन्दु वन सकता है।

कार्ल मार्क्स। फ़्रेडरिक एंगेल्स

लन्दन, २१ जनवरी, १८८२"

लगभग उसी वक़्त जेनेवा में "घोषणापत्र" का एक नया पोलिश संस्करण प्रकाशित हुआ।

फिर १८८५ में कोपेनहेगेन के *«Social-demokratisk Bibliothek»* में एक नया डेनिश अनुवाद छपा। दुर्भाग्यवश यह पर्याप्त रूप से पूर्ण नहीं है; कतिपय नितान्त महत्वपूर्ण अंशों को, जिन्होंने लगता है कि अनुवादक के सामने कठिनाइयां पैदा कीं, छोड़ दिया गया है; इसके अलावा उसमें यत्र-तत्र लापरवाही के चिह्न मिलते हैं; वे इस कारण आंखों को और भी ज्यादा खटकते हैं कि अनुवाद से पता चलता है कि यदि अनुवादक ने थोड़ी-सी और मेहनत की होती तो वह बहुत सुन्दर काम कर वैठते।

१८८५ में एक नया फ़्रांसीसी अनुवाद *«Le Socialiste»* में छपा; वह अब तक के अनुवादों में सर्वोत्तम है।

इस फ़्रांसीसी अनुवाद से किया गया एक स्पेनिश अनुवाद उसी वर्ष पहले माड्रिड के *«El Socialista»* में छपा तथा फिर एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किया गया—*«Manifesto del Partido Comunista»*, कार्ल मार्क्स तथा फ़्रेडरिक एंगेल्स, माड्रिड, *«El Socialista»* प्रकाशनगृह, एर्नान कोर्तेस मार्ग, ८।

यहां मैं उत्सुकतावश इस बात की भी चर्चा कर दूं कि १८८७ में कुस्तुनतुनिया के एक प्रकाशक से एक आर्मीनियाई अनुवाद की पांडुलिपि छापने का प्रस्ताव किया गया। परन्तु उस भले आदमी में मार्क्स के नाम से जुड़ी कोई चीज़ छापने की हिम्मत नहीं हुई। उसने अनुवादक से कहा कि वह पाण्डुलिपि में लेखक के रूप में अपना नाम लिखे परन्तु उसने ऐसा करने से इन्कार कर दिया।

अमरीका में किये गये कई अनुवाद इंगलैंड में सिलसिलेवार छपते रहे जो न्यूनाधिक रूप से अशुद्ध थे। अन्ततः प्रामाणिक अनुवाद १८८८ में तैयार हो गया। यह मेरे मित्र सैमुअल मूर का काम था और उसे प्रेस में भेजने से पहले हम दोनों ने मिलकर उस पर नज़र डाली। उसका नाम है "'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र', कार्ल मार्क्स तथा फ़्रेडरिक एंगेल्स। प्रामाणिक अंग्रेज़ी अनुवाद, सम्पादन तथा नोट्स फ़्रेडरिक एंगेल्स द्वारा, १८८८। लन्दन, विलियम रीस, १८५, फ़्लीट स्ट्रीट, ई० सी०।" मैंने उस संस्करण के कुछ नोट्स प्रस्तुत संस्करण में शामिल किये हैं।

"घोषणापत्र" का अपना एक अलग इतिहास रहा है। प्रकाशन के साथ ही उसका वैज्ञानिक समाजवाद के हरावलों द्वारा, जिनकी संख्या अभी बिलकुल ही अधिक न थी, उत्साहपूर्ण स्वागत हुआ (जैसा कि पहली भूमिका में उल्लिखित अनुवादों द्वारा स्पष्ट है), किन्तु थोड़े ही समय बाद, जून १८४८ में[16] पेरिस के मज़दूरों की पराजय से शुरू होनेवाली प्रतिक्रिया के साथ उसे पृष्ठभूमि में ढकेल दिया गया, और अन्त में जब नवम्बर १८५२ में कोलोन के कम्युनिस्टों को सज़ा दी गयी[17] तो वह "क़ानूनी तौर पर" बहिष्कृत कर दिया गया। फ़रवरी क्रांति के साथ जिस मज़दूर आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था, उसके सार्वजनिक रंगमंच से ओझल हो जाने के बाद "घोषणापत्र" भी पृष्ठभूमि में चला गया।

जब यूरोप के मज़दूर वर्ग ने शासक वर्गों की सत्ता पर एक और प्रहार करने के लिए पर्याप्त शक्ति फिर से संचित कर ली, तो अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ का जन्म हुआ। उसका उद्देश्य यूरोप और अमरीका के तमाम जुझारू मज़दूर वर्ग को एक विशाल सेना के रूप में एकजुट करना था। इसलिये संघ "घोषणापत्र" में स्थापित सिद्धांतों को प्रस्थान-बिन्दु मानकर

नहीं चल सकता था। उसका ऐसा कार्यक्रम होना लाज़िमी था जिससे इंगलैंड की ट्रेड-यूनियनों, फ़्रांस, वेल्जियम, इटली और स्पेन के प्रूदोंपंथियों तथा जर्मनी के लासालपंथियों* के लिए दरवाज़ा वन्द न हो जाये। इस तरह के कार्यक्रम को – इन्टरनेशनल की नियमावली[18] के प्राक्कथन को – मार्क्स ने बड़ी ख़ूवी के साथ लिखा जिसे वकूनिन और अराजकतावादियों तक ने माना। जहां तक "घोषणापत्र" में निरूपित सिद्धांतों की अन्तिम विजय का प्रश्न है, मार्क्स ने मज़दूर वर्ग के बौद्धिक विकास पर, जो संयुक्त कार्यकलाप तथा पारस्परिक विचार-विमर्श के फलस्वरूप निश्चित रूप से पैदा होता, पूर्णतया भरोसा किया। घटनाएं तथा पूंजी के विरुद्ध संघर्ष के वरावर उतार-चढ़ाव – विजयों से ज़्यादा पराजयें – लड़ाकों के सामने यह वात प्रत्यक्ष किये विना नहीं रह सकती थीं कि उनके विभिन्न प्रिय नीम-हकीमी नुस्ख़े अपर्याप्त हैं जिन पर वे अभी तक टिके हुए थे और उनके दिमाग़ों को मज़दूरों की मुक्ति की वास्तविक शर्तों को पूरी तरह समझने के लिए अधिक ग्रहणशील बनाये विना नहीं रह सकती थीं। और मार्क्स सही सिद्ध हुए। १८७४ में जव इन्टरनेशनल भंग हो गया तो उस समय का मज़दूर वर्ग, १८६४ की तुलना में, जव उसकी स्थापना हुई थी, एकदम भिन्न था। लैटिन देशों में प्रूदोंपंथ और जर्मनी का विशिष्ट लासालपंथ दम तोड़ रहे थे, और घोर दक़ियानूसी ब्रिटिश ट्रेड-यूनियनें तक धीरे-धीरे उस विंदु पर पहुंच रही थीं जहां १८८७ में स्वांसी कांग्रेस में उनके अध्यक्ष** उनके नाम पर यह एलान कर सके कि "महाद्वीपीय समाजवाद हमारे लिए आतंक नहीं रह गया है"। फिर भी १८८७ तक

---

*ख़ुद लासाल हमसे हमेशा यही कहते थे कि वह मार्क्स के "शिष्य" हैं और ऐसा होने के नाते वह निस्संदेह "घोषणापत्र" को आधार के रूप में ग्रहण करते थे। परन्तु उनके उन अनुयायियों की वात बिलकुल ही अलग थी जो राजकीय ऋणों से समर्थित उत्पादकों की सहकारी समितियों की लासाल की मांग से आगे नहीं बढ़ते थे और जो पूरे मज़दूर वर्ग को राजकीय सहायता के समर्थकों और आत्म-निर्भरता के समर्थकों में बांटते थे। (एंगेल्स का नोट।)

**डब्ल्यू० बीवेन। – सं०

महाद्वीपीय समाजवाद लगभग पूर्णतः वही सिद्धांत था जिसकी "घोषणापत्र" ने घोषणा की थी। चुनांचे "घोषणापत्र" का इतिहास १८४८ के बाद से आधुनिक मज़दूर आन्दोलन के इतिहास को एक हद तक प्रतिबिम्बित करता है। आज तो निस्संदेह "घोषणापत्र" समस्त समाजवादी साहित्य की सबसे अधिक प्रचलित, सबसे अधिक अन्तर्राष्ट्रीय कृति है और वह साइबेरिया से लेकर कैलिफ़ोर्निया तक सभी देशों के करोड़ों मज़दूरों का समान कार्यक्रम है।

फिर भी उसके प्रकाशन के समय हम उसे **समाजवादी** घोषणापत्र नहीं कह सकते थे। १८४७ में दो तरह के लोग समाजवादी माने जाते थे। एक ओर विभिन्न कल्पनावादी पद्धतियों के अनुयायी–ख़ासकर इंगलैंड में ओवेनपंथी और फ़्रांस में फ़ूरियेपंथी; ये दोनों मात्र मरणासन्न संकीर्ण पंथ बनकर रह गये थे; दूसरी ओर थे नाना प्रकार के सामाजिक नीम-हकीम, जो पूंजी तथा मुनाफ़े को ज़रा भी क्षति पहुंचाये बिना, सब तरह की टांकासाजी के बल पर सब क़िस्म की सामाजिक बुराइयों का अन्त कर देना चाहते थे। ये दोनों ही तरह के लोग मज़दूर आन्दोलन के बाहर थे तथा समर्थन के लिए "शिक्षित" वर्गों पर आस लगाये बैठे रहते थे। इसके विपरीत, मज़दूर वर्ग के जिस हिस्से को यह पूरा विश्वास हो चुका था कि मात्र राजनीतिक क्रान्तियां पर्याप्त नहीं हैं तथा जो समाज के आमूल पुनर्निर्माण की मांग करता था, वह उस समय अपने को कम्युनिस्ट कहता था। यह भोंडा, बेडौल, विशुद्ध रूप से सहज प्रेरणात्मक क़िस्म का कम्युनिज़्म था; फिर भी उसमें इतनी शक्ति थी कि उसने काल्पनिक कम्युनिज़्म की दो पद्धतियों को जन्म दिया–फ़्रांस में काबे के "इकारियन" कम्युनिज़्म और जर्मनी में वाइटलिंग[10] के कम्युनिज़्म को। १८४७ में समाजवाद पूंजीवादी आंदोलन तथा कम्युनिज़्म मज़दूर आन्दोलन था। कम से कम महाद्वीप में समाजवाद काफ़ी प्रतिष्ठाप्राप्त था जबकि कम्युनिज़्म इसके ठीक विपरीत। और चूंकि हमारी उस समय ही यह पक्की राय बन चुकी थी कि "मज़दूर वर्ग की मुक्ति स्वयं मज़दूर वर्ग का कार्य ही हो सकता है", इसलिए इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं थी कि हमें इन दोनों में से कौनसा नाम अपनाना चाहिए था। और न तब से इस नाम का त्याग करने का हमें कभी ख़्याल ही हुआ है।

"दुनिया के मज़दूरो, एक हो!"—जब यह नारा हमने आज से बयालीस साल पहले--प्रथम पेरिस क्रांति के ठीक पहले, जब सर्वहारा वर्ग स्वयं अपनी मांगों को लेकर सामने आया था,—बुलंद किया था, तब बहुत थोड़े लोगों ने उसे प्रतिध्वनित किया था। किन्तु २८ सितम्बर, १८६४ को पश्चिमी यूरोप के अधिकांश देशों के सर्वहाराओं ने मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ की स्थापना की जिसकी स्मृति गौरवपूर्ण है। यह सच है कि इन्टरनेशनल स्वयं केवल नौ साल जीवित रहा। किन्तु उसने सभी देशों के सर्वहाराओं का जो अविनाशी एका क़ायम कर दिया था वह आज भी जीवित है और पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली है। इसका सबसे बड़ा साक्षी आज का यह दिन है, क्योंकि आज के दिन, जब मैं ये पंक्तियां लिख रहा हूं, यूरोप और अमरीका के सर्वहारा अपनी जुझारू शक्तियों का पुनरवीक्षण कर रहे हैं जो पहली बार मैदान में उतारी गयी हैं एक सेना की तरह, एक झंडे के नीचे, एक तात्कालिक उद्देश्य के लिए—१८६६ में इन्टरनेशनल की जेनेवा कांग्रेस द्वारा और फिर १८८९ में पेरिस की मज़दूर कांग्रेस द्वारा घोषित आठ घंटे के काम के दिन को क़ानून द्वारा स्थापित कराने के उद्देश्य से—मैदान में उतारी गयी हैं। और आज के दृश्य से सभी देशों के पूंजीपतियों और ज़मींदारों की आंखें खुल जायेंगी और वे देख लेंगे कि तमाम देशों के मेहनतकश लोग आज सचमुच एक हैं।

काश, आज मार्क्स भी अपनी आंखों से इस दृश्य को देखने के लिए मेरे साथ होते!

फ़्रे० एंगेल्स

लंदन, १ मई, १८९०

१८९२ के पोलिश संस्करण की भूमिका

"कम्युनिस्ट घोषणापत्र" का एक नया पोलिश संस्करण निकालना आवश्यक हो गया है, यह तथ्य नाना प्रकार के विचारों को जन्म देता है।

सबसे पहले यह उल्लेखनीय है कि इधर "घोषणापत्र" यूरोपीय महाद्वीप में बड़े पैमाने के उद्योग का एक तरह का सूचक बन गया। किसी देश विशेष में बड़े पैमाने का उद्योग जितना विकसित होता है, उस देश के मज़दूरों में सम्पत्तिधारी वर्गों के सम्बन्ध में मज़दूर वर्ग के रूप में अपनी स्थिति का ज्ञान हासिल करने की मांग उतनी ही बढ़ती जाती है, उनके मध्य समाजवादी आन्दोलन उतना ही फैलता जाता है तथा "घोषणापत्र" की मांग उतनी ही बढ़ती जाती है। इस तरह किसी भी देश में उसकी भाषा में "घोषणापत्र" का जितनी संख्या में प्रसारण होता है, उससे मज़दूर आन्दोलन की स्थिति को ही नहीं, वरन बड़े पैमाने के उद्योग के विकास के परिमाण को भी मापा जा सकता है।

इसलिए नया पोलिश संस्करण पोलिश उद्योग की निश्चित प्रगति इंगित करता है। इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं है कि दस साल पहले प्रकाशित संस्करण के बाद वस्तुतः यह प्रगति हुई है। रूसी पोलैंड, कांग्रेसीय पोलैंड[20] रूसी साम्राज्य का बहुत बड़ा औद्योगिक क्षेत्र बन गया है। बड़े पैमाने का रूसी उद्योग जहां यत्र-तत्र बिखरा हुआ है—एक हिस्सा फ़िनलैंड की खाड़ी के आसपास, दूसरा—मध्य भाग में (मास्को तथा व्लादीमिर में), तीसरा—काला सागर और अज़ोव सागर के तटवर्ती क्षेत्रों तथा अन्य और स्थानों में—वहां पोलिश उद्योग को अपेक्षाकृत छोटे इलाक़े में ठूंस दिया गया है और वह इस तरह के संकेन्द्रण के लाभ तथा

हानि दोनों भोग रहा है। रूसी उद्योगपतियों ने लाभों को उस समय स्वीकारा जब उन्होंने पोलों को रूसी बनाने की उत्कट इच्छा के बावजूद पोलैंड के विरुद्ध संरक्षण टैरिफ़ों की मांग की। हानि–पोलिश उद्योगपतियों तथा रूसी सरकार के लिए–पोलिश मज़दूरों के बीच समाजवादी विचारों के द्रुत प्रसार तथा "घोषणापत्र" की बढ़ती हुई मांग में प्रत्यक्ष है।

परन्तु पोलिश उद्योग की यह तीव्र प्रगति, जो रूस के उद्योग के विकास की रफ़्तार को पीछे छोड़ रही है, अपनी जगह पोलिश जनता की अनन्त जीवन्तता तथा उसके आसन्न राष्ट्रीय पुनरुत्थान की नयी गारंटी है। और एक स्वतंत्र, मज़बूत पोलैंड का पुनरुत्थान ऐसा मामला है जो केवल पोलों से ही नहीं, वरन हम सब से भी सरोकार रखता है। यूरोपीय राष्ट्रों का ईमानदारी भरा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तभी सम्भव है जब इनमें से हर राष्ट्र अपने घर में पूर्णतया स्वायत्तशासी हो। १८४८ की क्रान्ति ने, जिसने सर्वहारा के झंडे के नीचे सर्वहारा योद्धाओं से केवल पूंजीपति वर्ग का काम क़राया, अपनी वसीयत के निष्पादकों – लूई बोनापार्त तथा बिस्मार्क[21] – के ज़रिये इटली, जर्मनी तथा हंगरी के लिए भी आज़ादी हासिल की; परन्तु पोलैंड को, जिस के द्वारा १७९२ से क्रान्ति के लिए किया जानेवाला कार्य इन तीनों के कुल कार्य से अधिक था, उस समय जब उसने १८६३ में दस गुनी अधिक रूसी शक्ति के सामने शिकस्त खायी,[22] अपने संसाधनों के सहारे छोड़ दिया गया। अभिजात वर्ग पोलिश स्वतंत्रता को न तो बरक़रार रख सका और न उसे फिर से हासिल कर सका। पूंजीपति वर्ग के लिए यह स्वतंत्रता आज कम से कम ऐसी तो है ही जिसके प्रति वह उदासीन रह सकता है। फिर भी यूरोपीय राष्ट्रों के सामंजस्यपूर्ण सहयोग के लिए वह आवश्यक है। उसे केवल तरुण पोलिश सर्वहारा वर्ग हासिल कर सकता है और उसके हाथों में वह सुरक्षित भी है। बात यह है कि यूरोप के बाक़ी सभी मज़दूरों के लिए पोलैंड की स्वतंत्रता उतनी ही आवश्यक है जितनी वह स्वयं पोलिश मज़दूरों के लिए है।

फ़्रे० एंगेल्स

लन्दन, १० फ़रवरी, १८९२

१८९३ के इतालवी संस्करण की भूमिका

इतालवी पाठक के नाम

कहा जा सकता है कि "कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र" के प्रकाशन का १८ मई, १८४८ के दिन के साथ, मिलान तथा बर्लिन में उन क्रान्तियों के दिन के साथ संयोग हुआ है जो उन दो राष्ट्रों के सशस्त्र विद्रोह थे जिनमें से एक तो यूरोपीय महाद्वीप के तथा दूसरा भूमध्यसागर क्षेत्र के केन्द्र में स्थित है; ये दो राष्ट्र तब तक फूट तथा आन्तरिक कलह के कारण दुर्बल पड़े हुए थे तथा इस कारण वे विदेशी आधिपत्य के चंगुल में फंस गये। जहां इटली आस्ट्रिया के सम्राट के मातहत था, वहां जर्मनी रूसी साम्राज्य के ज़ार के जूए के, जो अधिक परोक्ष होते हुए भी कम कारगर नहीं था, मातहत था। १८ मार्च, १८४८ के नतीजों ने इटली तथा जर्मनी दोनों का यह कलंक धो दिया; अगर १८४८ से १८७१ तक ये दो महान राष्ट्र पुनर्गठित हुए और फिर से स्वतंत्र हो गये, तो इसकी वजह, जैसा कि मार्क्स कहा करते थे, यह थी कि जिन लोगों ने १८४८ की क्रान्ति को कुचला था, वे ही न चाहते हुए भी उसकी वसीयत के निष्पादक बन गये।

वह क्रान्ति सर्वत्र मज़दूर वर्ग का कार्य थी; मज़दूर वर्ग ने ही बैरीकेडों का निर्माण किया था और उसका मूल्य अपना ख़ून देकर चुकाया था। सिर्फ़ पेरिस के मज़दूर ही ऐसे लोग थे जिनका पूंजीपति वर्ग का तख़्ता उलटने का एक निश्चित इरादा था। वे अपने वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग के बीच विद्यमान अपरिहार्य विरोध से अवश्य अवगत थे, फिर भी न देश की आर्थिक प्रगति और न आम फ़्रांसीसी मज़दूरों का बौद्धिक

विकास अभी ऐसी मंज़िल पर पहुंच पाये थे जो सामाजिक पुनर्निर्माण को सम्भव बनाती। अतः अन्ततोगत्वा क्रान्ति के फल पूंजीपति वर्ग द्वारा बटोरे गये। दूसरे देशों में, इटली, जर्मनी तथा आस्ट्रिया में मज़दूर पूंजीपति वर्ग को सत्ता तक पहुंचाने के अलावा और कुछ नहीं कर सके। परन्तु किसी भी देश में पूंजीपति वर्ग का शासन राष्ट्रीय स्वाधीनता के बिना असम्भव है। अतः १८४८ की क्रान्ति भी अपने साथ उन राष्ट्रों की एकता तथा स्वायत्तता लायी जिनका तब तक अभाव था — इटली, जर्मनी, हंगरी में; अब पोलैंड की बारी है।

इस तरह १८४८ की क्रान्ति भले ही समाजवादी क्रान्ति न रही हो, उसने उसके लिए पथ प्रशस्त किया, उसकी आधारभूमि तैयार की। तमाम देशों में बड़े पैमाने के उद्योग के विकास के कारण पूंजीवादी शासन व्यवस्था ने पिछले पैंतालीस वर्षों के दौरान सर्वत्र बहुत बड़ी तादाद वाले, संकेन्द्रित तथा सशक्त सर्वहारा वर्ग का निर्माण किया। इस तरह उसने "घोषणापत्र" के शब्दों में अपनी क़ब्र खोदनेवाले तैयार कर दिये। हर राष्ट्र की स्वायत्तता तथा एकता को पुनःस्थापित किये बिना सर्वहारा वर्ग की अन्तर्राष्ट्रीय एकता अथवा समान लक्ष्यों की प्राप्ति में इन राष्ट्रों का शान्तिपूर्ण सचेतन सहयोग हासिल करना असम्भव होगा। ज़रा १८४८ के पूर्व की राजनीतिक अवस्थाओं में इतालवी, हंगेरियाई, जर्मन, पोलिश तथा रूसी मज़दूरों की संयुक्त अन्तर्राष्ट्रीय कार्रवाई की कल्पना तो कीजिये!

इसलिए १८४८ की लड़ाइयां बेकार नहीं लड़ी गयीं। उस क्रान्तिकारी युग से हमें अलग करनेवाले पैंतालीस वर्ष भी निरुद्देश्य नहीं रहे। फल परिपक्व हो रहे हैं, और मैं केवल यही कामना करता हूं कि इस इतालवी अनुवाद का प्रकाशन इतालवी सर्वहारा की विजय के लिए उसी तरह शुभ हो जिस तरह मूल का प्रकाशन अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्ति के लिए शुभ रहा।

"घोषणापत्र" अतीत में पूंजीवाद द्वारा अदा की गयी क्रान्तिकारी भूमिका के साथ पूरा न्याय करता है। पहला पूंजीवादी राष्ट्र इटली था। सामन्ती मध्य युग के अन्त तथा आधुनिक पूंजीवादी युग के समारम्भ का द्योतक एक विराट मानव है, वह है एक इतालवी दांते, मध्ययुग का अन्तिम कवि तथा आधुनिक युग का प्रथम कवि। सन १३०० की भांति

ग्राज भी नूतन ऐतिहासिक युग समीप ग्राता जा रहा है। क्या इटली हमें ऐसा नया दांते देगा जो इस नये, सर्वहारा युग के जन्म की घड़ी का द्योतक होगा?

फ़्रेडरिक एंगेल्स

लन्दन, १ फ़रवरी, १८९३

कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र

यूरोप को एक भूत आतंकित कर रहा है—कम्युनिज़्म का भूत। इस भूत को भगाने के लिए पोप और ज़ार, मेटर्निख़ और गीज़ो[23], फ़्रांसीसी उग्रवादी और जर्मन ख़ुफ़िया पुलिस—बूढ़े यूरोप की सभी शक्तियों ने पुनीत गठबंधन बना लिया है।

कौनसी ऐसी विरोधी पार्टी है जिसे उसके सत्तारूढ़ विरोधियों ने कम्युनिस्ट कहकर बदनाम न किया हो? कौनसी ऐसी विरोधी पार्टी है जिसने पलटकर अपने से अधिक आगे बढ़ी हुई विरोधी पार्टियों और अपने प्रतिक्रियावादी विरोधियों—दोनों पर ही कम्युनिस्ट होने का आरोप लगाकर उनकी भर्त्सना न की हो?

इस तथ्य से दो बातें निकलती हैं:

१. यूरोप की सभी शक्तियों ने स्वीकार कर लिया है कि कम्युनिज़्म स्वयं एक शक्ति है।

२. अब समय आ गया है कि कम्युनिस्ट खुले आम तमाम दुनिया के सामने अपने विचारों, अपने उद्देश्यों और अपनी प्रवृत्तियों को प्रकाशित करें और कम्युनिज़्म के भूत की इस नानी की कहानी का पार्टी के अपने एक घोषणापत्र द्वारा ख़ात्मा कर दें।

इसी उद्देश्य से विभिन्न राष्ट्रों के कम्युनिस्ट लन्दन में जमा हुए और उन्होंने निम्नलिखित "घोषणापत्र" तैयार किया जो अंग्रेज़ी, फ़्रांसीसी, जर्मन, इतालवी, फ़्लेमिश और डेनिश भाषाओं में प्रकाशित किया जायेगा।

१

पूंजीपति और सर्वहारा*

अभी तक आविर्भूत समस्त समाज का इतिहास** वर्ग संघर्षों का इतिहास रहा।

---

*पूंजीपति से मतलव आधुनिक पूंजीपति वर्ग से, अर्थात् सामाजिक उत्पादन साधनों के स्वामियों और उजरती श्रम के मालिकों से है। सर्वहारा से मतलव आधुनिक उजरती मज़दूरों से है, जिनके पास उत्पादन का अपना ख़ुद का कोई साधन नहीं होता, इसलिए जो जीवित रहने के लिए अपनी श्रम शक्ति को वेचने को विवश होते हैं। (१८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

**अर्थात् समस्त लिपिबद्ध इतिहास। १८४७ में समाज का पूर्व-इतिहास, अर्थात् लिखित इतिहास के पहले का सामाजिक संगठन, बिलकुल अज्ञात था। उस के बाद हेक्स्ट्हाउज़ेन[24] ने रूस में भूमि के सामुदायिक स्वामित्व का पता लगाया; मारेर[25] ने सिद्ध किया कि यही वह सामाजिक आधार था, जिसे ग्रहण कर ट्यूटन नस्लों ने इतिहास में पदार्पण किया और धीरे-धीरे यह पता चला कि भारत से आयरलैंड तक हर जगह ग्राम समुदाय ही समाज का आदि रूप था या रहा होगा। इस आदिम कम्युनिस्ट समाज के आंतरिक संगठन का अपने ठेठ रूप में स्पष्टीकरण मौर्गन[26] की गोत्र के असली स्वरूप और क़बीले के साथ उसके वास्तविक संबंध की महती खोज द्वारा हुआ। इस आदिम समुदाय के विघटित होने के साथ समाज में अलग-अलग और अंततः विरोधी वर्गों का विभेद होने लगता है। मैंने अपनी पुस्तक *«Der Ursprung der Familie, des Privateigenthums und des Staats», 2. Aufl, Stuttgart, 1886*, ("परिवार, निजी संपत्ति तथा राज्य की उत्पत्ति") में इन ग्राम समुदायों के विघटन की प्रक्रिया पर नज़र दौड़ाने की कोशिश की है। (१८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

स्वतंत्र मनुष्य और दास, पेट्रीशियन और प्लेवियन, सामन्ती प्रभु और भूदास, शिल्प-संघ का उस्ताद-कारीगर* और मज़दूर-कारीगर—संक्षेप में उत्पीड़क और उत्पीड़ित वरावर एक दूसरे का विरोध करते आये हैं। वे कभी छिपे, कभी प्रकट रूप से लगातार एक दूसरे से लड़ते रहे हैं, जिस लड़ाई का अन्त हर बार या तो पूरे समाज के क्रांतिकारी पुनर्गठन में, या संघर्षरत वर्गों की वर्वादी में हुआ है।

इतिहास के विगत युगों में हम प्रायः हर जगह विभिन्न सामाजिक श्रेणियों में विभाजित समाज का एक पेचीदा ढांचा पाते हैं—सामाजिक श्रेणियों की नानारूपी दर्जावन्दी। प्राचीन रोम में पेट्रीशियन, नाइट, प्लेवियन और दास मिलते हैं। मध्ययुग में सामंती प्रभु, अधीन जागीरदार, उस्ताद-कारीगर, मज़दूर-कारीगर, भूदास दिखाई देते हैं; और लगभग इन सभी वर्गों में गौण दर्जावन्दियां होती हैं।

आधुनिक पूंजीवादी समाज ने, जो सामन्ती समाज के ध्वंस से पैदा हुआ है, वर्ग विरोधों को ख़तम नहीं किया। उसने केवल पुराने के स्थान पर नये वर्ग, उत्पीड़न की पुरानी अवस्थाओं के स्थान पर नयी अवस्थाएं और संघर्ष के पुराने रूपों की जगह नये रूप खड़े कर दिये हैं।

किन्तु दूसरे युगों की तुलना में हमारे युग की, पूंजीवादी युग की विशेषता यह है कि उसने वर्ग विरोधों को सरल वना दिया है: आज पूरा समाज दो विशाल शत्रु शिविरों में, एक दूसरे के ख़िलाफ़ खड़े दो विशाल वर्गों में—पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग में—अधिकाधिक विभक्त होता जा रहा है।

मध्ययुग के भूदासों से प्रारम्भिक शहरों के अधिकारपत्न प्राप्त वर्गर पैदा हुए थे। इन्हीं वर्गरों से आगे चलकर प्रथम पूंजीवादी तत्त्वों का विकास हुआ।

अमरीका की खोज और गुडहोप केप का रास्ता निकाल लेने से उदीयमान पूंजीपति वर्ग के प्रसार के लिए नया क्षेत्र खुल गया। ईस्ट

---

*शिल्प-संघ के उस्ताद-कारीगर से मतलव शिल्प-संघ के अध्यक्ष से नहीं, उसके पूर्णाधिकारप्राप्त सदस्य से है, जिसे शिल्प-संघ के अंदर उस्ताद का स्थान प्राप्त था। (१८८८ के अंग्रेजी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

इंडीज़ और चीनी बाज़ारों, अमरीका के उपनिवेशन, उपनिवेशों के साथ व्यापार, विनिमय के साधनों और माल उत्पादन में आम वृद्धि ने वाणिज्य, नौपरिवहन और उद्योग को, और फलस्वरूप लड़खड़ाते हुए सामन्ती समाज के क्रान्तिकारी तत्वों को, तेज़ी के साथ विकास करने का अभूतपूर्व अवसर दिया।

उद्योग की सामंती प्रणाली, जिसमें औद्योगिक उत्पादन पर बन्द शिल्प-संघों का एकाधिकार होता था, नये बाज़ारों की बढ़ती हुई ज़रूरतों की पूर्ति के लिए अब काफ़ी न थी। अतः उसकी जगह मैनुफ़ेक्चर की प्रथा ने ले ली। शिल्प-संघ के उस्ताद-कारीगरों को मैनुफ़ेक्चरिंग मध्यम वर्ग ने ढकेलकर एक ओर कर दिया। अलग-अलग निगमित शिल्प-संघों का श्रम विभाजन प्रत्येक पृथक-पृथक वर्कशाप के श्रम विभाजन के आगे लुप्त हो गया।

इस बीच बाज़ार बराबर बढ़ते गये और माल की मांग भी बराबर बढ़ती गयी। ऐसी दशा में मैनुफ़ेक्चर की प्रथा भी नाकाफ़ी सिद्ध होने लगी। तब भाप और मशीन के उपयोग ने औद्योगिक उत्पादन में क्रान्ति पैदा कर दी। अतः अब मैनुफ़ेक्चर का स्थान दैत्याकार आधुनिक उद्योग ने, और औद्योगिक मध्यम वर्ग का स्थान औद्योगिक धन्नासेठों ने, पूरी की पूरी औद्योगिक फ़ौजों के नेताओं ने, आधुनिक पूंजीपतियों ने ले लिया।

आधुनिक उद्योग ने विश्व बाज़ार की स्थापना की है, जिसके लिए अमरीका की खोज ने पथ प्रशस्त कर दिया था। इस बाज़ार ने वाणिज्य, नौपरिवहन और स्थल संचार की ज़बर्दस्त उन्नति की। आगे चलकर इस उन्नति का प्रभाव उद्योग के विस्तार पर पड़ा, और जिस अनुपात में उद्योग, वाणिज्य, नौपरिवहन और रेलवे में वृद्धि हुई, उसी अनुपात में पूंजीपति वर्ग ने उन्नति की और उसकी पूंजी बढ़ी और उसने मध्ययुग से चले आते हुए प्रत्येक वर्ग को पृष्ठभूमि में ढकेल दिया।

चुनांचे हम देखते हैं कि किस तरह आधुनिक पूंजीपति वर्ग स्वयं एक लम्बे विकासक्रम की, उत्पादन और विनिमय की प्रणालियों में हुई अनेक क्रान्तियों की उपज है।

पूंजीपति वर्ग की उन्नति के प्रत्येक पग के साथ उस वर्ग की तदनुरूप राजनीतिक उन्नति हुई। सामन्तों के प्रभुत्व काल में वह एक उत्पीड़ित

वर्ग था; मध्ययुगीन कम्यून* में वह सशस्त्र और स्वशासित संघ था; कहीं पर (जैसे इटली और जर्मनी में) स्वतंत्र शहरी प्रजातंत्र और कहीं पर (जैसे फ़्रांस में) राजतंत्र की कराधीन "तृतीय श्रेणी"; बाद में मैनुफ़ेक्चर की प्रथा के दौरान उसने अभिजात वर्ग के प्रतिसंतुलन के रूप में अर्द्धसामंती अथवा पूर्ण निरंकुश राजतंत्र की सेवा की और शक्तिशाली राजतन्त्रों की आधारशिला का काम किया तथा अंततः आधुनिक उद्योग और विश्व बाज़ार की स्थापना के बाद आधुनिक प्रातिनिधिक राज्य में अनन्य रूप से अपने लिए पूर्ण राजनीतिक प्रभुत्व जीत लिया। आधुनिक राज्य का कार्यकारी मंडल पूरे पूंजीपति वर्ग के सम्मिलित हितों का प्रबन्ध करनेवाली कमेटी के अलावा और कुछ नहीं है।

पूंजीपति वर्ग ने इतिहास में बहुत ही क्रान्तिकारी भूमिका अदा की है।

पूंजीपति वर्ग ने, जहां पर भी उसका पलड़ा भारी हुआ, वहां सभी सामन्ती, पितृसत्तात्मक और काव्यात्मक संबंधों का अन्त कर दिया। उसने मनुष्य को अपने "स्वाभाविक बड़ों" के साथ बांध रखनेवाले नाना प्रकार के सामंती सम्बन्धों को निर्ममता से तोड़ डाला; और नग्न स्वार्थ के, "नक़द पैसे-कौड़ी" के हृदयशून्य व्यवहार के सिवा मनुष्यों के बीच और कोई दूसरा संबंध बाक़ी नहीं रहने दिया। धार्मिक श्रद्धा के स्वर्गोपम आनन्दातिरेक को, वीरोचित उत्साह और कूपमंडूकतापूर्ण भावुकता को

---

*फ़्रांस के नवोदित नगरों ने अपने सामन्ती प्रभुओं और मालिकों से स्थानीय स्वशासन और "तृतीय श्रेणी" के रूप में राजनीतिक अधिकार जीतने के पहले ही अपने को "कम्यून" कहना शुरू कर दिया था। आम तौर से यहां पूंजीपति वर्ग के आर्थिक विकास के सम्बन्ध में इंगलैंड को और उसके राजनीतिक विकास के सम्बन्ध में फ़्रांस को उदाहरण माना गया है। (**१८८८ के अंग्रेजी संस्करण में एंगेल्स का नोट।**)

इटली और फ़्रांस के शहरियों ने अपने शहरी समुदायों को सामन्ती प्रभुओं से स्वशासन के अपने प्रारम्भिक अधिकारों को ख़रीद लेने या छीन लेने के बाद यही नाम दिया था। (**१८९० के जर्मन संस्करण में एंगेल्स का नोट।**)

उसने आना-पाई के स्वार्थी हिसाव-किताब के वर्फ़ीले पानी में डुवा दिया है। मनुष्य के वैयक्तिक मूल्य को उसने विनिमय मूल्य वना दिया है, और पहले के अनगिनत अनपहरणीय अधिकारपत्र द्वारा प्रदत्त स्वातंत्र्यों की जगह अव उसने उस एक अन्तःकरणशून्य स्वातंत्र्य की स्थापना की है जिसे मुक्त व्यापार कहते हैं। संक्षेप में, धार्मिक और राजनीतिक भ्रमजाल के पीछे छिपे शोषण के स्थान पर उसने नग्न, निर्लज्ज, प्रत्यक्ष और पाशविक शोषण की स्थापना की है।

जिन पेशों के संवंध में अव तक लोगों के मन में आदर और श्रद्धा की भावना थी, उन सब का प्रभामण्डल पूंजीपति वर्ग ने छीन लिया। डाक्टर, वकील, पुरोहित, कवि और वैज्ञानिक, सभी को उसने अपना उजरती मज़दूर बना लिया है।

पूंजीपति वर्ग ने पारिवारिक सम्बन्धों के ऊपर से भावुकता का पर्दा उतार फेंका है और पारिवारिक सम्बन्ध को केवल द्रव्य के सम्बन्ध में वदल डाला है।

पूंजीपति वर्ग ने दिखा दिया है कि मध्ययुग में शक्ति के उन बर्बर प्रदर्शनों के साथ-साथ, जिनकी प्रतिगामी लोग इतनी तारीफ़ करते हैं, अकर्मण्यता और आलस्य कैसे जुड़े हुए थे। उसने ही सबसे पहले दिखलाया कि मानव की क्रियाशक्ति क्या कुछ कर सकती है। उसने जो जादू कर दिखाया है वह मिस्र के पिरामिडों, रोम की जल प्रणाली और गोथिक गिरजाघरों से कहीं अधिक आश्चर्यजनक है। उसने जैसे बड़े-बड़े अभियान आयोजित किये हैं, उनके सामने पुराने समय में जातियों के समस्त निष्क्रमण और धार्मिक अभियान[27] फीके पड़ जाते हैं।

उत्पादन के औज़ारों में लगातार क्रांतिकारी परिवर्तन और उसके फलस्वरूप उत्पादन के सम्बन्धों में, और साथ-साथ समाज के सारे सम्बन्धों में क्रांतिकारी परिवर्तन के विना पूंजीपति वर्ग जीवित नहीं रह सकता। इसके विपरीत, उत्पादन के पुराने तरीक़ों को ज्यों का त्यों बनाये रखना पहले के सभी औद्योगिक वर्गों के जीवित रहने की पहली शर्त थी। उत्पादन में निरंतर क्रान्तिकारी परिवर्तन, सभी सामाजिक अवस्थाओं में लगातार उथल-पुथल, शाश्वत अनिश्चितता और हलचल — ये चीज़ें पूंजीवादी

युग को पहले के सभी युगों से अलग करती हैं। सभी स्थिर और जड़ीभूत सम्बन्ध, जिनके साथ प्राचीन और पूज्य पूर्वाग्रहों तथा मतों की एक पूरी शृंखला जुड़ी हुई होती है, मिटा दिये जाते हैं, और सभी नये बननेवाले सम्बन्ध जड़ीभूत होने के पहले ही पुराने पड़ जाते हैं। जो कुछ भी ठोस है, वह हवा में उड़ जाता है, जो कुछ पावन है, वह भ्रष्ट हो जाता है, और आख़िरकार मनुष्य संजीदा नज़र से जीवन की वास्तविक हालतों को, मानव मानव के आपसी सम्बन्धों को देखने के लिए मजबूर हो जाता है।

अपने माल के लिए बराबर फैलते हुए बाज़ार की ज़रूरत के कारण पूंजीपति वर्ग दुनिया के कोने-कोने की ख़ाक छानता है। वह हर जगह घुसने को, हर जगह पैर जमाने को, हर जगह सम्पर्क क़ायम करने को बाध्य होता है।

विश्व बाज़ार को अपने लाभ के लिए इस्तेमाल कर पूंजीपति वर्ग ने हर देश में उत्पादन और खपत को एक सार्वभौमिक रूप दे दिया है। प्रतिगामियों की भावनाओं को गहरी चोट पहुंचाते हुए उसने उद्योग के पैरों के नीचे से उस राष्ट्रीय आधार को खिसका दिया है जिसपर वह खड़ा था। पुराने जमे-जमाये सभी राष्ट्रीय उद्योग या तो नष्ट कर दिये गये हैं या नित्यप्रति नष्ट किये जा रहे हैं। उनका स्थान ऐसे नये-नये उद्योग ले रहे हैं, जिनकी स्थापना सभी सभ्य देशों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न बन जाती है; उनका स्थान ऐसे नये उद्योग ले रहे हैं जो उत्पादन के लिए अब अपने देश का कच्चा माल इस्तेमाल नहीं करते, बल्कि दूर-दूर देशों से लाया हुआ कच्चा माल इस्तेमाल करते हैं; उनका स्थान ऐसे उद्योग ले रहे हैं जिनके उत्पादन की खपत सिर्फ़ उसी देश में नहीं, बल्कि पृथ्वी के कोने-कोने में होती है। उन पुरानी आवश्यकताओं की जगह, जिन्हें स्वदेश की बनी चीज़ों से पूरा किया जाता था, अब ऐसी नयी-नयी आवश्यकताएं पैदा हो गयी हैं जिन्हें पूरा करने के लिए दूर-दूर के देशों और भू-भागों से माल मंगाना होता है। पुरानी स्थानीय और राष्ट्रीय पृथकता और आत्मनिर्भरता का स्थान चौतरफ़ा पारस्परिक सम्पर्क ने, सार्वभौमिक अन्तःनिर्भरता ने ले लिया है। और भौतिक उत्पादन की ही

Manifest

der

Kommunistischen Partei.

Veröffentlicht im Februar 1848.

Proletarier aller Länder vereinigt euch.

London.

Gedruckt in der Office der „Bildungs-Gesellschaft für Arbeiter"

von J. E. Burghard.

46, Liverpool Street, Bishopsgate.

"कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र" कृति के प्रथम संस्करण का मुखपृष्ठ

तरह, बौद्धिक उत्पादन के जगत् में भी यही परिवर्तन घटित हुआ है। अलग-अलग राष्ट्रों की बौद्धिक कृतियां सार्वभौमिक सम्पत्ति बन गयी हैं। राष्ट्रीय एकांगीपन और संकुचित दृष्टिकोण दोनों अधिकाधिक असंभव होते जा रहे हैं, और अनेक राष्ट्रीय और स्थानीय साहित्यों से एक विश्व साहित्य उत्पन्न हो रहा है।

उत्पादन के तमाम औज़ारों में तीव्र उन्नति और संचार साधनों की विपुल सुविधाओं के कारण पूंजीपति वर्ग सभी राष्ट्रों को, यहां तक कि बर्बर से बर्बर राष्ट्रों को भी सभ्यता की परिधि में खींच लाता है। उसके माल की सस्ती क़ीमत एक ऐसा तोपख़ाना है जिसके ज़रिये वह सभी चीनी दीवारों को ढहा देता है, और विदेशियों के प्रति तीव्र और घोर घृणा रखनेवाली बर्बर जातियों को आत्मसमर्पण के लिए मजबूर कर देता है। प्रत्येक राष्ट्र को, इस भय से कि अन्यथा वह लुप्त हो जायेगा, वह पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली अपनाने के लिए मजबूर कर देता है; वह उन्हें मजबूर करता है कि, जिसे वह सभ्यता कहता है, उसे वे भी अपने बीच क़ायम करें, अर्थात् ख़ुद पूंजीपति बन जायें। संक्षेप में, पूंजीपति वर्ग सारे जगत् को अपने ही सांचे में ढाल देता है।

पूंजीपति वर्ग ने देहातों को शहरों के अधीन कर दिया है। उसने बहुत बड़े-बड़े शहर बसाये हैं और देहातों की तुलना में शहरों की जनसंख्या में प्रचंड वृद्धि की है, और इस प्रकार जनसंख्या के एक बड़े भाग को देहाती जीवन की जड़ता से मुक्त किया है। जिस तरह पूंजीपति वर्ग ने देहातों को शहरों का आश्रित बना दिया है, उसी तरह उसने बर्बर और अर्द्धबर्बर देशों को सभ्य देशों का, कृषक राष्ट्रों को पूंजीवादी राष्ट्रों का, पूरब को पश्चिम का आश्रित बना दिया है।

आबादी, उत्पादन साधनों और संपत्ति की बिखरी हुई अवस्था को पूंजीपति वर्ग अधिकाधिक ख़तम करता जाता है। बिखरी हुई आबादियों को उसने एक जगह जमा किया है, उत्पादन साधनों का केन्द्रीकरण किया है और सम्पत्ति को चन्द लोगों के हाथों में संकेंद्रित कर दिया है। राजनीतिक केन्द्रीकरण इसका अवश्यम्भावी परिणाम था। जो प्रांत पहले स्वतंत्र या ढीले-ढाले ढंग से सम्बद्ध थे और जिनके हित और क़ानून,

जिनकी सरकारें और कर प्रणालियां अलग-अलग थीं, वे समूहवद्ध होकर, एक सरकार, एक विधि-संहिता, एक राष्ट्रीय वर्ग हित, एक सीमा और कर प्रणाली के साथ, आज एक राष्ट्र बन गये हैं।

मुश्किल से अपने एक शताब्दी के शासन काल में पूंजीपति वर्ग ने जितनी शक्तिशाली और प्रचंड उत्पादक शक्तियां उत्पन्न की हैं, उतनी पिछली तमाम पीढ़ियों में मिलाकर भी नहीं उत्पन्न हुईं। प्राकृतिक शक्तियों का मनुष्य द्वारा वशीभूत किया जाना, मशीनों का उपयोग, उद्योग और खेतीवारी में रसायन का प्रयोग, भाप-नौपरिवहन, रेलवे, विजली के तार, पूरे के पूरे महाद्वीपों का खेती करने लायक़ वनाया जाना, नदियों से नहरें निकाला जाना, पूरी आवादियों का मानो छूमंतर से पैदा हो जाना,—क्या पिछली शताब्दियों में कोई यह सोच भी सकता था कि सामाजिक श्रम के गर्भ में ऐसी उत्पादक शक्तियां सोयी पड़ी हैं?

तो हम देखते हैं: उत्पादन और विनिमय के साधन, जिनकी वुनियाद पर पूंजीपति वर्ग ने अपना निर्माण किया है, सामन्ती समाज में ही पैदा हो गये थे। लेकिन उत्पादन और विनिमय के इन साधनों के विकास की एक ख़ास मंज़िल पर वे अवस्थाएं, जिनमें सामन्ती समाज उत्पादन और विनिमय करता था, अर्थात् कृषि और उद्योग का सामन्ती संगठन, या यूं कहिये कि स्वामित्व के सामंती सम्वन्ध, नवोन्नत उत्पादक शक्तियों से विलकुल वेमेल हो गये; वे वहुत सारी वेड़ियां वन गये। उन्हें तोड़ फेंकना आवश्यक हो गया, और उन्हें तोड़ फेंका गया।

उनका स्थान पूंजीपति वर्ग के आर्थिक और राजनीतिक प्रभुत्व और अनुकूल सामाजिक और राजनीतिक ढांचे के साथ मुक्त होड़ ने ले लिया।

आज हमारे सामने ठीक इसी तरह की गति हो रही है। उत्पादन, विनिमय और स्वामित्व के पूंजीवादी सम्बन्धों सहित आधुनिक पूंजीवादी समाज, वह समाज जिसने तिलस्म से उत्पादन और विनिमय के ऐसे विशाल साधनों को खड़ा कर दिया है, एक ऐसे जादूगर के समान है जिसने अपने जादू के ज़ोर से पाताल लोक की शक्तियों को बुला तो लिया है, लेकिन अब उन्हें क़ावू में रखने में वह असमर्थ है। पिछले कई दशकों से उद्योग और वाणिज्य का इतिहास आधुनिक उत्पादक शक्तियों का

उत्पादन की आधुनिक अवस्थाओं के ख़िलाफ़, स्वामित्व के उन सम्बन्धों के ख़िलाफ़ विद्रोह का ही इतिहास है, जो पूंजीपति वर्ग और उसके शासन के अस्तित्व की शर्तें हैं। यहां पर उन वाणिज्यिक संकटों का ज़िक्र कर देना काफ़ी है जिनके नियतकालिक आवर्तन द्वारा पूंजीवादी समाज के अस्तित्व की, हर बार अधिकाधिक सख़्ती के साथ, परीक्षा होती है। इन संकटों में न केवल मौजूदा पैदावार के ही, बल्कि पहले से उत्पन्न उत्पादक शक्तियों के भी एक बड़े भाग को समय-समय पर नष्ट कर दिया जाता है। इन संकटों के समय एक महामारी फैल जाती है जो पिछले तमाम युगों में एक बिलकुल बेतुकी बात समझी जाती—अर्थात् अतिउत्पादन की महामारी। समाज अचानक अपने को क्षणिक बर्बरता की अवस्था में लौटा हुआ पाता है; ऐसा लगता है कि उसके जीवन निर्वाह के तमाम साधनों को किसी अकाल या सर्वनाशी विश्व युद्ध ने एकबारगी ख़तम कर दिया है; उद्योग और वाणिज्य नष्ट हो गये प्रतीत होते हैं। और यह सब क्यों? इसलिए कि समाज में सभ्यता का, जीवन निर्वाह के साधनों का, उद्योग और वाणिज्य का अजीर्ण हो गया है। समाज की मौजूदा उत्पादक शक्तियां पूंजीवादी स्वामित्व की अवस्थाओं को अब उन्नत नहीं करतीं; बल्कि वे इन अवस्थाओं के लिए अतीव सशक्त बन जाती हैं, जिनकी बेड़ियों में वे जकड़ी हुई होती हैं; और जैसे ही वे इन बेड़ियों को तोड़ देती हैं वैसे ही वे पूरे पूंजीवादी समाज में अव्यवस्था पैदा कर देती हैं, पूंजीवादी स्वामित्व को ख़तरे में डाल देती हैं। पूंजीवादी समाज की अवस्थाएं उनके द्वारा उत्पादित संपत्ति को समाविष्ट करने के लिए बहुत संकुचित हो जाती हैं। पूंजीपति वर्ग इन संकटों से किस प्रकार अपने को उबारता है? एक ओर उत्पादक शक्तियों के एक बड़े भाग को ज़बरदस्ती नष्ट करके और दूसरी ओर नये-नये बाज़ारों पर क़ब्ज़ा जमाकर और साथ ही पुराने बाज़ारों का और भी मुकम्मल तौर पर इस्तेमाल कर—यानी और भी वृहत् और विनाशकारी संकटों के लिए पथ प्रशस्त कर, और इन संकटों के रोकने के साधनों को घटाकर।

जिन हथियारों से पूंजीपति वर्ग ने सामन्तवाद को मार गिराया था, वे ही अब पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ मोड़ दिये जाते हैं।

किन्तु पूंजीपति वर्ग ने ऐसे हथियारों को ही नहीं गढ़ा है जो उसका अन्त कर देंगे, बल्कि उसने ऐसे आदमियों को भी पैदा किया है जो इन हथियारों का इस्तेमाल करेंगे—आधुनिक मज़दूर वर्ग—सर्वहारा वर्ग।

जिस अनुपात में पूंजीपति वर्ग का, अर्थात् पूंजी का विकास होता है, उसी अनुपात में सर्वहारा वर्ग का, आधुनिक मज़दूर वर्ग का, उन श्रमजीवियों के वर्ग का विकास होता है, जो तभी तक ज़िन्दा रह सकते हैं जब तक उन्हें काम मिलता जाये, और उन्हें काम तभी तक मिलता है, जब तक उनका श्रम पूंजी में वृद्धि करता है। ये श्रमजीवी, जो अपने को अलग-अलग बेचने के लिए लाचार हैं, अन्य व्यापारिक माल की तरह ख़ुद भी माल हैं, और इसलिए वे होड़ के हर उतार-चढ़ाव तथा बाज़ार की हर तेज़ी-मन्दी के शिकार होते हैं।

मशीनों के विस्तृत इस्तेमाल तथा श्रम विभाजन के कारण सर्वहाराओं के काम का वैयक्तिक चरित्र नष्ट हो गया है, और इसलिए यह काम उनके लिए आकर्षक नहीं रह गया है। मज़दूर मशीन का पुछल्ला बन जाता है और उससे सबसे सरल, नीरस और आसानी से प्राप्त योग्यता की मांग की जाती है। इसलिए मज़दूर के उत्पादन पर ख़र्च लगभग पूर्णतः उसके जीवन निर्वाह और वंश वृद्धि के लिए आवश्यक साधनों तक सीमित रह गया है। लेकिन हर माल का, और इसलिए श्रम[28] का भी दाम उसके उत्पादन में लगे हुए ख़र्च के बराबर होता है। अतः जिस अनुपात में काम की अरुचिकरता में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में मज़दूरी घटती है। यही नहीं, जिस मात्रा में मशीनों का इस्तेमाल तथा श्रम विभाजन बढ़ता है उसी मात्रा में श्रम का बोझ भी बढ़ता जाता है, चाहे यह काम के घंटे बढ़ाने के ज़रिये हो या निर्धारित समय में मज़दूरों से अधिक काम लेने या मशीन की रफ़्तार बढ़ाने आदि के ज़रिये।

आधुनिक उद्योग ने पितृसत्तात्मक उस्ताद-कारीगर के छोटे-से वर्कशाप को औद्योगिक पूंजीपति के विशाल कारख़ाने में बदल दिया है। कारख़ाने में भरे झुंड के झुंड श्रमजीवी सैनिकों की तरह संगठित किये जाते हैं। औद्योगिक फ़ौज के सिपाहियों की तरह वे बाक़ायदा एक दरजाबार तरतीब में बंटे हुए अफ़सरों और सार्जेंटों की कमान में रखे जाते हैं। वे केवल

पूंजीपति वर्ग और पूंजीवादी राज्य के ही गुलाम नहीं हैं; बल्कि हर दिन, हर घंटे वे मशीन के, ओवरसियर के और सर्वोपरि ख़ुद कारख़ानेदार पूंजीपति के गुलाम होते हैं। यह तानाशाही जितनी ही अधिक खुलकर यह घोषित करती है कि मुनाफ़ा ही उसका लक्ष्य और उद्देश्य है, उतनी ही अधिक वह तुच्छ, घृणित और कटु होती है।

शारीरिक श्रम में जितनी ही प्रवीणता और मशक़्क़त की ज़रूरत कम होती जाती है, अर्थात् जितनी ही आधुनिक उद्योग में प्रगति होती जाती है, उतना ही अधिक पुरुषों का स्थान स्त्रियां लेती जाती हैं। जहां तक मज़दूर वर्ग का प्रश्न है, आयु और लिंगभेद का कोई विशिष्ट सामाजिक महत्त्व नहीं रह गया है। सभी श्रम के औज़ार हैं—आयु और लिंगभेद के अनुसार किसी पर कम ख़र्च बैठता है, तो किसी पर ज्यादा।

कारख़ानेदार द्वारा मज़दूर के शोषण का फ़िलहाल अन्त हुआ नहीं, और उसे नक़द मज़दूरी मिली नहीं, कि फ़ौरन पूंजीपति वर्ग के अन्य भाग—मकान-मालिक, दूकानदार, गिरवी रखनेवाला महाजन, आदि—उस पर टूट पड़ते हैं।

मध्यम वर्ग के निम्न स्तर—छोटे कारोबारी, दूकानदार, आम तौर पर किराया-जीवी, दस्तकार और किसान—ये सब धीरे-धीरे सर्वहारा वर्ग की स्थिति में पहुंच जाते हैं। कुछ तो इसलिए कि जिस पैमाने पर आधुनिक उद्योग चलता है उसके लिए उनकी छोटी पूंजी पूरी नहीं पड़ती और बड़े पूंजीपतियों के साथ होड़ में वह डूब जाती है; और कुछ इसलिए कि उत्पादन के नये-नये तरीक़ों के निकल आने के कारण उनके विशिष्टीकृत कौशल का कोई मूल्य नहीं रह जाता है। इस प्रकार आबादी के सभी वर्गों से सर्वहारा वर्ग की भर्ती होती है।

सर्वहारा वर्ग विकास की विभिन्न मंज़िलों से गुज़रता है। जन्म काल से ही पूंजीपति वर्ग से उसका संघर्ष शुरू हो जाता है।

शुरू में अकेले-दुकेले मज़दूर लड़ते हैं, फिर एक कारख़ाने के मज़दूर मिलकर लड़ते हैं, तब फिर एक उद्योग के एक इलाक़े के सब मज़दूर एकसाथ उस पूंजीपति से मोर्चा लेते हैं जो उनका सीधे-सीधे शोषण करता है। उनका हमला उत्पादन की पूंजीवादी अवस्थाओं पर नहीं होता, बल्कि

ख़ुद उत्पादन के औज़ारों पर होता है। वे अपनी मेहनत के साथ होड़ करनेवाले बाहर से मंगाये गये सामानों को नष्ट कर देते हैं, मशीनों को चूर कर देते हैं, फ़ैक्टरियों में आग लगा देते हैं और मध्ययुग के कारीगर की खोई हुई हैसियत को फिर से क़ायम करने की बलपूर्वक कोशिश करते हैं।

इस अवस्था में मज़दूर देश भर में बिखरे हुए असंबद्ध और अपनी ही आपसी होड़ के कारण बंटे हुए जन-समुदाय होते हैं। अगर कहीं मिलकर वे अपना एक ठोस संगठन बना भी लेते हैं तो यह अभी उनके सक्रिय एके का फल नहीं, बल्कि पूंजीपति वर्ग के एके का फल होता है, क्योंकि पूंजीपति वर्ग को अपने राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पूरे सर्वहारा वर्ग को गतिशील करना पड़ता है और वह ऐसा करने में अभी कुछ समय तक समर्थ भी होता है। इसलिए इस अवस्था में सर्वहारा वर्ग अपने शत्रुओं से नहीं, बल्कि अपने शत्रुओं के शत्रुओं से, निरंकुश राजतंत्र के अवशेषों, भूस्वामियों, ग़ैर-औद्योगिक पूंजीपतियों, निम्न-पूंजीपतियों से लड़ता है। इस प्रकार, इतिहास की समस्त गतिविधि के सूत्र पूंजीपतियों के हाथों में केन्द्रित रहते हैं; इस प्रकार हासिल की गयी हर जीत पूंजीपति वर्ग की जीत होती है।

लेकिन उद्योग के विकास के साथ-साथ सर्वहारा वर्ग की संख्या में ही वृद्धि नहीं होती, बल्कि वह बड़ी-बड़ी जमातों में संकेन्द्रित हो जाता है, उसकी ताक़त बढ़ जाती है और उसे अपनी इस ताक़त का अधिकाधिक एहसास होने लगता है। मशीनें जिस अनुपात में श्रम के तमाम भेदों को मिटाती जाती हैं और लगभग सभी जगह मज़दूरी को एक ही निम्न स्तर पर लाती जाती हैं, उसी अनुपात में सर्वहारा वर्ग की पांतों में नाना प्रकार के हित और जीवन की अवस्थाएं अधिकाधिक एकसम होती जाती हैं। पूंजीपति वर्ग की बढ़ती हुई आपसी होड़ और उससे पैदा होनेवाले व्यापारिक संकटों के कारण मज़दूरी और भी अस्थिर हो जाती है। मशीनों में लगातार सुधार, जो निरंतर तेजी के साथ बढ़ता जाता है, मज़दूरों की जीविका को अधिकाधिक अनिश्चित बना देता है। अलग-अलग मज़दूरों और अलग-अलग पूंजीपतियों की टक्करें अधिकाधिक रूप से दो वर्गों के

बीच की टक्करों की शक्ल अख़्तियार करती जाती हैं। और तब पूंजीपतियों के विरुद्ध मज़दूर अपने संगठन (ट्रेड-यूनियनें) बनाने लगते हैं, मज़दूरी की दर को क़ायम रखने के लिए वे संघबद्ध होते हैं; समय-समय पर होनेवाली इन टक्करों के लिए पहले से तैयार रहने के निमित्त वे स्थायी संघों की स्थापना करते हैं। जहां-तहां उनकी लड़ाई विद्रोहों का रूप धारण कर लेती है।

जब-तब मज़दूरों की जीत भी होती है लेकिन केवल वक़्ती तौर पर। उनकी लड़ाइयों का असली फल तात्कालिक नतीजों में नहीं, बल्कि मज़दूरों की निरंतर बढ़ती हुई एकता में है। आधुनिक उद्योग द्वारा उत्पन्न किये गये संचार साधनों से, जो अलग-अलग जगहों के मज़दूरों को एक दूसरे के सम्पर्क में ला देते हैं, एकता के इस काम में मदद मिलती है। एक ही प्रकार के अनगिनत स्थानीय संघर्षों को केन्द्रीकृत करके उन्हें एक राष्ट्रीय वर्ग संघर्ष का रूप देने के लिए बस इसी प्रकार के सम्पर्क की ज़रूरत होती है। लेकिन प्रत्येक वर्ग संघर्ष एक राजनीतिक संघर्ष होता है। और उस एके को, जिसे हासिल करने के लिए पुराने ज़माने में यातायात की घोर असुविधाओं के कारण मध्ययुग के बर्गरों को सदियां लगी थीं, रेलों की कृपा से आधुनिक सर्वहारा कुछ ही वर्षों में हासिल कर लेते हैं।

सर्वहाराओं का अपना वर्गरूपी संगठन और फलतः एक राजनीतिक पार्टी के रूप में उनका संगठन उनकी आपसी होड़ के कारण बराबर गड़बड़ी में पड़ जाता है। लेकिन हर बार वह फिर उठ खड़ा होता है—पहले से भी अधिक मज़बूत, दृढ़ और शक्तिशाली बनकर। ख़ुद पूंजीपति वर्ग की भीतरी फूटों का फ़ायदा उठाकर वह मज़दूरों के अलग-अलग हितों को क़ानूनी तौर पर भी मनवा लेता है। इंगलैंड में दस घंटे के काम के दिन का क़ानून इसी तरह पास हुआ था।

पुराने समाज के विभिन्न वर्गों की टक्करें कुल मिलाकर सर्वहारा वर्ग के विकास को अनेक रूपों में मदद ही पहुंचाती हैं। पूंजीपति वर्ग अपने को लगातार संघर्ष में फंसा पाता है: पहले अभिजात वर्ग के विरुद्ध, फिर ख़ुद पूंजीपति वर्ग के उन भागों के विरुद्ध, जिनके हित औद्योगिक

प्रगति के प्रतिकूल हो जाते हैं और अन्ततः विदेशों के पूंजीपतियों के विरुद्ध तो सदा ही। इन तमाम लड़ाइयों में वह सर्वहारा वर्ग से अपील करने के लिए, उससे मदद मांगने के लिए और इस प्रकार उसे राजनीतिक अखाड़े में खींच लाने के लिए मजबूर होता है। अतः पूंजीपति वर्ग ख़ुद ही सर्वहारा वर्ग को अपने राजनीतिक और सामान्य शिक्षण के तत्त्वों से सम्पन्न कर देता है, अर्थात् उनके हाथ में पूंजीपति वर्ग से लड़ने के लिए हथियार देता है।

इसके अलावा, जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं, उद्योग की उन्नति के कारण, शासक वर्गों के पूरे के पूरे समूह सर्वहाराओं के अस्तित्व की अवस्था में पहुंचा दिये जाते हैं, या कम से कम उनके अस्तित्व की अवस्थाओं के लिए ख़तरा पैदा हो जाता है। ये लोग भी सर्वहारा वर्ग को ज्ञानोद्दीप्ति और प्रगति के नये तत्त्व प्रदान करते हैं।

अन्त में, वर्ग संघर्ष जब निर्णायक घड़ी के नज़दीक पहुंच जाता है, तब शासक वर्ग में, वास्तव में सम्पूर्ण पुराने समाज के अन्दर, हो रही विघटन की प्रक्रिया इतना प्रचंड और प्रत्यक्ष रूप धारण कर लेती है कि शासक वर्ग का एक छोटा-सा हिस्सा उससे अलग होकर क्रान्तिकारी वर्ग के साथ—उस वर्ग के साथ जिसके हाथ में भविष्य होता है—आ मिलता है। इसलिए, जिस तरह पहले के युग में सामन्तों का एक भाग टूटकर पूंजीपति वर्ग से आ मिला था, उसी तरह अब पूंजीपति वर्ग का एक हिस्सा, और ख़ास तौर से पूंजीवादी विचारकों का एक हिस्सा, जिसने अपने को इतिहास की समग्र गति को सैद्धांतिक रूप में समझने के योग्य स्तर पर उठा लिया है, सर्वहारा वर्ग से आकर मिल जाता है।

पूंजीपति वर्ग के मुक़ाबले में आज जितने भी वर्ग खड़े हैं उन सब में सर्वहारा ही वास्तव में क्रांतिकारी वर्ग है। दूसरे वर्ग आधुनिक उद्योग के समक्ष ह्रासोन्मुख होकर अंततः विलुप्त हो जाते हैं; सर्वहारा वर्ग ही उसकी मौलिक और विशिष्ट उपज है।

निम्न मध्यम वर्ग के लोग—छोटे कारख़ानेदार, दूकानदार, दस्तकार और किसान—ये सब मध्यम वर्ग के अंश के रूप में अपने अस्तित्व को

नष्ट होने से बचाने के लिए पूंजीपति वर्ग से लोहा लेते हैं। इसलिए वे क्रान्तिकारी नहीं, रूढ़िवादी हैं। इतना ही नहीं, चूंकि वे इतिहास के चक्र को पीछे की ओर घुमाने की कोशिश करते हैं इसलिए वे प्रतिगामी हैं। अगर कहीं वे क्रान्तिकारी हैं तो सिर्फ़ इसलिए कि उन्हें बहुत जल्द सर्वहारा वर्ग में मिल जाना है; चुनांचे वे अपने वर्त्तमान नहीं, बल्कि भविष्य के हितों की रक्षा करते हैं; अपने दृष्टिकोण को त्यागकर वे सर्वहारा का दृष्टिकोण अपना लेते हैं।

"ख़तरनाक वर्ग"[29] समाज का कचड़ा, पुराने समाज़ के निम्नतम स्तरों में से निकला हुआ और निष्क्रियता के कीचड़ में सड़ता हुआ समुदाय जहां-तहां सर्वहारा क्रांति की आंधी में पड़कर आंदोलन में खिंच आ सकता है, लेकिन उसके जीवन की अवस्थाएं उसे प्रतिक्रियावादी षड्यंत्र के भाड़े के टट्टू का काम करने के लिए कहीं अधिक मौजूं बना देती हैं।

सर्वहारा वर्ग की मौजूदा अवस्था में पुराने समाज की अवस्थाओं का अब नाम-निशान तक बाक़ी नहीं रह गया है। सर्वहारा के पास कोई सम्पत्ति नहीं है; अपनी स्त्री और अपने बच्चों के साथ उसका जो सम्बन्ध है वह पूंजीवादी पारिवारिक सम्बन्धों से बिलकुल ही भिन्न है। आधुनिक औद्योगिक श्रम ने, पूंजी के आधुनिक जूए ने—जो इंगलैंड, फ़्रांस, अमरीका और जर्मनी, सब जगह एक ही जैसा है—उसके राष्ट्रीय चरित्र के सभी चिह्नों का अन्त कर दिया है। क़ानून, नैतिकता, धर्म—ये सब उसके लिए पूंजीवादी पूर्वाग्रह मात्र हैं, जिनकी ओट में घातक पूंजीवादी हित छिपे हुए हैं।

आज तक जिन-जिन वर्गों का पलड़ा भारी हुआ है, उन सब ने अपने पहले से हासिल दरजे को मज़बूत बनाने के लिए समाज को अपनी अधिकरण प्रणाली के अधीन करने की कोशिश की है। सर्वहारा वर्ग अपनी अब तक की अधिकरण प्रणाली का और उसके साथ-साथ पहले की प्रत्येक अधिकरण प्रणाली का अन्त किये बिना समाज की उत्पादक शक्तियों का स्वामी नहीं बन सकता। सर्वहारा वर्ग के पास जोड़ने और सुरक्षित रखने के लिए अपना कुछ भी नहीं है; उसका लक्ष्य निजी स्वामित्व की पुरानी सभी गारंटियों और ज़मानतों को नष्ट कर देना है।

पहले के तमाम ऐतिहासिक आन्दोलन अल्पमत के आन्दोलन रहे हैं या अल्पमत के फ़ायदे के लिए रहे हैं। किन्तु सर्वहारा आन्दोलन विशाल बहुमत का, विशाल बहुमत के फ़ायदे के लिए होनेवाला चेतन तथा स्वतन्त्र आन्दोलन है। हमारे वर्तमान समाज का सबसे निचला स्तर, सर्वहारा वर्ग, शासकीय समाज की तमाम ऊपरी परतों को पलटे बिना हिल तक नहीं सकता, किसी प्रकार अपने को ऊपर नहीं उठा सकता।

पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ सर्वहारा वर्ग का संघर्ष, यद्यपि अन्तर्य की दृष्टि से नहीं, तथापि रूप की दृष्टि से शुरू में राष्ट्रीय संघर्ष होता है। हर देश के सर्वहारा वर्ग को, ज़ाहिर है, पहले अपने ही पूंजीपतियों से निबटना होगा।

सर्वहारा वर्ग के विकास की सबसे सामान्य अवस्थाओं का वर्णन करते हुए हमने वर्तमान समाज के अन्दर न्यूनाधिक प्रच्छन्न रूप से चलनेवाले गृहयुद्ध का उसी बिन्दु तक चित्रण किया है, जहां वह युद्ध प्रत्यक्ष क्रान्ति के रूप में भड़क उठता है और जहां पूंजीपति वर्ग को बलपूर्वक उलटना सर्वहारा वर्ग की प्रभुता के लिए आधार प्रस्तुत करता है।

अभी तक, जैसा कि हम देख चुके हैं, हर तरह का समाज उत्पीड़क और उत्पीड़ित वर्गों के विरोध पर क़ायम रहा है। लेकिन किसी भी वर्ग का उत्पीड़न करने के लिए यह ज़रूरी है कि उसे कम से कम ऐसी सुविधाएं दी जायें जिससे और न सही तो, एक ग़ुलाम वर्ग के रूप में, वह ज़िन्दा रह सके। भूदास व्यवस्था के युग में भूदास ने उन्नति कर कम्यून की सदस्यता हासिल कर ली थी, उसी तरह जैसे सामंती निरंकुशता के जूए के नीचे निम्न-पूंजीपति पूंजीपति बन गया था। लेकिन आधुनिक मजदूर की दशा बिलकुल उल्टी है। उद्योग की उन्नति के साथ, ऊपर उठने के बजाय, वह स्वयं अपने वर्ग के अस्तित्व के लिए आवश्यक अवस्थाओं के स्तर के नीचे गिरता जाता है। वह कंगाल हो जाता है और उसकी मुफ़लिसी आबादी और दौलत से भी ज्यादा तेज़ी से बढ़ती है। ऐसी स्थिति में यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि पूंजीपति वर्ग अब समाज का शासक बने रहने के और समाज पर अपने अस्तित्व की अवस्थाओं को, अनिवार्य नियम के रूप में, लादने के अयोग्य है। पूंजीपति वर्ग शासन

करने के अयोग्य है क्योंकि वह अपने गुलाम को गुलामी की हालत में जिन्दा रहने की गारंटी देने में असमर्थ है, क्योंकि वह उसके जीवन स्तर में ऐसी गिरावट नहीं रोक सकता जिसके फलस्वरूप वह उसकी कमाई खाने के वजाय उसका पेट भरने को मजबूर हो जाता है। समाज अब पूंजीपति वर्ग के मातहत नहीं रह सकता,—दूसरे शब्दों में, पूंजीपति वर्ग का अस्तित्व अब समाज से मेल नहीं खाता।

पूंजीपति वर्ग के अस्तित्व और प्रभुत्व की लाज़िमी शर्त पूंजी का निर्माण और वृद्धि है; और पूंजी की शर्त है उजरती श्रम। उजरती श्रम पूर्णतया मज़दूरों की आपसी होड़ पर निर्भर करता है। उद्योग की उन्नति, जिसे पूंजीपति वर्ग अनिवार्यतः अग्रसर करता है, होड़ के कारण उत्पन्न मज़दूरों के अलगाव की जगह पर उनका संसर्गजनित क्रान्तिकारी एका क़ायम कर देती है। इस तरह आधुनिक उद्योग का विकास पूंजीपति वर्ग के पैरों के नीचे से उस ज़मीन को ही खिसका देता है जिसके आधार पर वह उत्पादन करता है और पैदावार को हड़प लेता है। अतः पूंजीपति वर्ग सर्वोपरि अपनी क़ब्र खोदनेवालों को पैदा करता है। उसका पतन और सर्वहारा वर्ग की विजय दोनों समान रूप से अनिवार्य हैं।

२

सर्वहारा और कम्युनिस्ट

समग्र रूप से सर्वहारा वर्ग के साथ कम्युनिस्टों का क्या सम्बन्ध है?

कम्युनिस्ट मज़दूर वर्ग की दूसरी पार्टियों के मुक़ाबले में अपनी कोई अलग पार्टी नहीं बनाते।

समग्र रूप से सर्वहारा वर्ग के हितों के अलावा और उनसे पृथक् उनके कोई हित नहीं हैं।

वे सर्वहारा आन्दोलन को किसी ख़ास नमूने पर ढालने या उसे विशेष रूप प्रदान करने के लिए अपना कोई संकीर्णतावादी सिद्धान्त स्थापित नहीं करते।

कम्युनिस्टों और दूसरी मज़दूर पार्टियों में सिर्फ़ यह अंतर है कि: १. विभिन्न देशों के सर्वहाराओं के राष्ट्रीय संघर्षों में राष्ट्रीयता के तमाम भेदभावों को छोड़कर वे पूरे सर्वहारा वर्ग के सामान्य हितों का पता लगाते हैं और उन्हें सामने लाते हैं; २. पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ सर्वहारा वर्ग का संघर्ष जिन विभिन्न मंज़िलों से गुज़रता हुआ आगे बढ़ता है उनमें हमेशा और हर जगह वे समग्र आन्दोलन के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

अतः एक ओर, व्यावहारिक दृष्टि से, कम्युनिस्ट हर देश की मज़दूर पार्टियों के सबसे उन्नत और कृतसंकल्प जुज़ होते हैं, ऐसे जुज़ जो औरों को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं; दूसरी ओर, सैद्धान्तिक दृष्टि से, सर्वहारा वर्ग के विशाल जन-समुदाय की अपेक्षा इस अर्थ में श्रेष्ठ हैं कि वे सर्वहारा आन्दोलन के आगे बढ़ने के रास्ते की, उसके हालात और सामान्य अन्तिम नतीजों की सुस्पष्ट समझ रखते हैं।

कम्युनिस्टों का तात्कालिक ध्येय वही है जो दूसरी सर्वहारा पार्टियों का है—यानी सर्वहारा को एक वर्ग के रूप में संगठित करना, पूंजीवादी प्रभुत्व का तख़्ता उलटना और राजनीतिक सत्ता पर सर्वहारा वर्ग का अधिकार क़ायम करना।

कम्युनिस्टों के सैद्धांतिक निष्कर्ष जगत्-सुधारक होने का दम भरनेवाले इस या उस व्यक्ति द्वारा ईजाद किये गये या ढूंढ़ निकाले गये विचारों या सिद्धांतों पर क़तई आधारित नहीं हैं।

वे केवल मौजूदा वर्ग संघर्ष से, हमारी नज़रों के सामने हो रही ऐतिहासिक गतिविधि से उत्पन्न यथार्थ सम्बन्धों की सामान्य अभिव्यक्ति हैं। मौजूदा स्वामित्व सम्बन्धों को मिटा देने की बात कम्युनिज़्म की निराली विशेषता हरगिज़ नहीं है।

पहले समय में सभी स्वामित्व सम्बन्ध ऐतिहासिक अवस्थाओं में परिवर्तन होने पर ऐतिहासिक परिवर्तन के निरंतर अधीन रहे हैं।

उदाहरण के लिए, फ़्रांसीसी क्रांति ने पूंजीवादी स्वामित्व के हक़ में सामन्तवादी स्वामित्व को नष्ट कर दिया।

कम्युनिज़्म की लाक्षणिक विशेषता यह नहीं है कि वह स्वामित्व को आम तौर से ख़तम कर देना चाहता है, बल्कि यह है कि वह पूंजीवादी स्वामित्व को ख़तम कर देना चाहता है।

लेकिन आधुनिक पूंजीवादी निजी स्वामित्व उत्पादन तथा उपज के अधिकरण की उस प्रणाली की अन्तिम तथा सबसे सर्वांगपूर्ण अभिव्यक्ति है, जो वर्ग विरोध और मुट्ठी भर लोगों द्वारा बहुतों के शोषण पर आश्रित है।

इस अर्थ में कम्युनिस्टों के सिद्धांत को केवल एक वाक्य में यूं कहा जा सकता है: निजी स्वामित्व का उन्मूलन।

हम कम्युनिस्टों पर आरोप लगाया गया है कि हम स्वयं अपनी मेहनत से पैदा की गयी सम्पत्ति हासिल करने के मनुष्य के अधिकार का अपहरण कर लेना चाहते हैं, जिस सम्पत्ति के बारे में कहा जाता है कि वह तमाम वैयक्तिक स्वतंत्रता, क्रियाशीलता और स्वाधीनता का मूल आधार है।

सख़्त मशक़्क़त से कमायी गयी, ख़ुद हासिल की गयी, ख़ुद पैदा

की गयी सम्पत्ति! आपका मतलब क्या छोटे दस्तकार और छोटे किसान की सम्पत्ति से है, स्वामित्व के उस रूप से है जो पूंजीवादी रूप से पहले था? उसको मिटाने की कोई ज़रूरत नहीं है; उद्योग के विकास ने पहले ही उसको बहुत कुछ नष्ट कर दिया है और जो कुछ रहा-सहा है, उसे भी वह दिनोंदिन नष्ट कर रहा है।

क्या फिर आपका मतलब आधुनिक पूंजीवादी निजी सम्पत्ति से है?

लेकिन क्या उजरती श्रम श्रमजीवी के लिए कोई सम्पत्ति पैदा करता है? हरगिज़ नहीं। वह तो पूंजी पैदा करता है, यानी ऐसी सम्पत्ति पैदा करता है जो उजरती श्रम का शोषण करती है, और जिसके बढ़ने की शर्त ही यह है कि वह नये शोषण के लिए उजरती श्रम को पैदा करती जाये। अपने वर्तमान रूप में स्वामित्व पूंजी और उजरती श्रम के विरोध पर क़ायम है। आइए, इस विरोध के दोनों पहलुओं पर ग़ौर करें।

पूंजीपति होना उत्पादन में केवल व्यक्तिगत ही नहीं, बल्कि एक सामाजिक हैसियत रखना है। पूंजी—एक सामूहिक उपज है, और समाज के केवल अनेक सदस्यों की संयुक्त कार्रवाई से ही, बल्कि अंततोगत्वा समाज के सभी सदस्यों के मिली-जुली कार्रवाई से ही उसे गतिशील किया जा सकता है।

इस भांति पूंजी व्यक्तिगत न होकर एक सामाजिक शक्ति है।

इसलिए पूंजी जब आम स्वामित्व बना दी जाती है, जब उसे समाज के तमाम सदस्यों के स्वामित्व का रूप दे दिया जाता है, तब वैयक्तिक स्वामित्व सामाजिक स्वामित्व में नहीं बदल जाती। तब स्वामित्व का केवल सामाजिक रूप बदल जाता है। उसका वर्ग रूप मिट जाता है।

आइये, अब उजरती श्रम के पहलू पर विचार करें।

उजरती श्रम का औसत दाम न्यूनतम मज़दूरी है, अर्थात् निर्वाह साधन की वह मात्रा, जो मज़दूर की हैसियत से मज़दूर की जिन्दगी क़ायम रखने के लिए बिलकुल जरूरी हो। इसलिए, उजरती मज़दूर को अपने श्रम से जो कुछ हस्तगत होता है, वह उसके अस्तित्व को बनाये रखने और प्रजनन के लिए ही काफ़ी होता है। हम श्रम की उपज के इस व्यक्तिगत अधिकरण का अन्त नहीं करना चाहते, जो मुश्किल से मानव जीवन क़ायम रखने

और प्रजनन के लिए किया जाता है और जिसमें ऐसी बचत की गुंजाइश नहीं होती जिससे दूसरों के श्रम को वशीभूत किया जा सके। हम जिस चीज़ को ख़तम कर देना चाहते हैं वह है इस अधिकरण का वह दयनीय रूप, जिसके अन्तर्गत मज़दूर पूंजी बढ़ाने के लिए ही ज़िन्दा रहता है, और उसे उसी हद तक ज़िन्दा रहने दिया जाता है जिस हद तक शासक वर्ग के स्वार्थों को उसकी ज़रूरत होती है।

पूंजीवादी समाज में जीवित श्रम संचित श्रम को बढ़ाने का केवल एक साधन है। कम्युनिस्ट समाज में संचित श्रम मज़दूर के अस्तित्व को व्यापक, सम्पन्न और उन्नत बनाने का साधन है।

इस प्रकार, पूंजीवादी समाज में वर्तमान के ऊपर अतीत हावी होता है; कम्युनिस्ट समाज में अतीत के ऊपर वर्तमान हावी होता है। पूंजीवादी समाज में पूंजी स्वतंत्र है और उसका व्यक्तित्व होता है; किन्तु जीवित व्यक्ति परतंत्र है और उसका कोई व्यक्तित्व नहीं होता।

फिर भी पूंजीपति वर्ग कहता है कि इस परिस्थिति को ख़तम कर देने का मतलब व्यक्तित्व और स्वतंत्रता को ख़तम कर देना है! और यह ठीक ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हम पूंजीवादी व्यक्तित्व, पूंजीवादी स्वतंत्रता और पूंजीवादी स्वाधीनता को जड़-मूल से ख़तम कर देना चाहते हैं।

मौजूदा पूंजीवादी अवस्थाओं के अन्तर्गत स्वाधीनता का अर्थ है मुक्त व्यापार, मुक्त क्रय-विक्रय।

लेकिन अगर क्रय-विक्रय मिट जाता है, तो मुक्त क्रय-विक्रय भी मिट जायेगा। हमारे पूंजीपतियों की मुक्त क्रय-विक्रय की बातों को, आम स्वाधीनता के बारे में उनकी तमाम "बड़ी-बड़ी बातों" को, अगर मध्ययुग के सीमित क्रय-विक्रय के या उस समय के बंधनों में जकड़े हुए व्यापारियों के मुक़ाबले में देखा जाये, तो उनका कुछ मतलब हो सकता है; लेकिन क्रय-विक्रय, उत्पादन की पूंजीवादी अवस्थाओं और स्वयं पूंजीपति वर्ग के कम्युनिस्ट उन्मूलन के मुक़ाबले में वे निरर्थक हैं।

हम निजी स्वामित्व को ख़तम कर देना चाहते हैं, इसे सुनकर आपके रोंगटे खड़े हो जाते हैं। लेकिन आपके मौजूदा समाज में दस में से नौ

आदमियों के लिए निजी स्वामित्व अभी से ही ख़तम हो चुका है; चन्द लोगों के पास यदि निजी सम्पत्ति है भी तो उसका एकमात्र कारण यही है कि दस में नौ आदमियों के पास वह नहीं है। इसलिए, आप हमारे ख़िलाफ़ स्वामित्व की ऐसी व्यवस्था को ख़तम कर देने की इच्छा रखने का जुर्म लगाते हैं जिसके अस्तित्व के लिए ज़रूरी शर्त यह है कि समाज के अधिकांश भाग के पास कोई सम्पत्ति न हो।

संक्षेप में आपका आरोप यह है कि हम आपका स्वामित्व ख़तम कर देना चाहते हैं। तो यह बिलकुल ठीक है। हम ठीक यही करना चाहते हैं।

आपका कहना है कि श्रम का ज्यों ही पूंजी, मुद्रा या लगान के रूप में—एक ऐसी सामाजिक शक्ति के रूप में जिसपर इजारेदारी क़ायम की जा सकती है—रूपान्तरण बन्द हो जायेगा, यानी ज्यों ही व्यक्तिगत स्वामित्व का पूंजीवादी स्वामित्व में, पूंजी में रूपान्तरण बन्द हो जायेगा, त्यों ही व्यक्तित्व का लोप हो जायेगा।

तो आपको यह क़बूल करना होगा कि "व्यक्ति" का आपके लिए एक ही अर्थ है—पूंजीपति या सम्पत्ति का मध्यमवर्गीय स्वामी। इस व्यक्ति को तो अवश्य ही रास्ते से हटा देना चाहिए, उसका होना अवश्य ही असम्भव बना देना चाहिए।

कम्युनिज़्म किसी आदमी को समाज की उपज को हस्तगत करने की शक्ति से वंचित नहीं करता; वह केवल इस हस्तगतकरण के ज़रिये दूसरों के श्रम को वशीभूत करने की शक्ति से उसे वंचित करता है।

यह कहा गया है कि यदि निजी स्वामित्व को ख़तम कर दिया गया तो सारा काम-काज ठप हो जायेगा और दुनिया भर में आलस्य छा जायेगा।

इसके अनुसार तो पूंजीवादी समाज को घोर आलस्य के कारण न जाने कब का रसातल पहुंच जाना चाहिए था, क्योंकि इस समाज के जो सदस्य मेहनत करते हैं वे कुछ नहीं प्राप्त करते, और जो प्राप्त करते हैं, वे काम नहीं करते। वास्तव में यह पूरा तर्क इसी द्विरुक्ति की एक अभिव्यक्ति है कि अगर पूंजी नहीं रह जायेगी तो उजरती श्रम भी नहीं रह जायेगा।

भौतिक वस्तुओं के उत्पादन और हस्तगतकरण की कम्युनिस्ट प्रणाली के सम्बन्ध में जो आरोप लगाये गये हैं, वे ही आरोप उसी तरह से बौद्धिक रचनाओं के उत्पादन और हस्तगतकरण की कम्युनिस्ट प्रणालियों के सम्बन्ध में भी लगाये जाते हैं। जिस तरह से वर्ग स्वामित्व का विलोपन पूंजीपति वर्ग को उत्पादन का ही विलोपन प्रतीत होता है, उसी तरह से वर्ग संस्कृति का विलोपन उसे सारी संस्कृति का विलोपन प्रतीत होता है।

वह संस्कृति, जिसके विनाश के बारे में वह इतना रोता-धोता है, अधिकांश जनता के लिए महज़ मशीन की तरह काम करने की प्रशिक्षा मात्र है।

लेकिन हमसे उलझने से तब कोई लाभ नहीं है जब तक पूंजीवादी स्वामित्व के उन्मूलन के हमारे इरादे को आप आज़ादी, संस्कृति, क़ानून, आदि की अपनी पूंजीवादी धारणाओं के मापदंड से नापते हैं; आपके विचार स्वयं ही पूंजीवादी उत्पादन और पूंजीवादी स्वामित्व की अवस्थाओं की उपज हैं, ठीक उसी तरह जिस तरह कि आपका क़ानून केवल आपके वर्ग की इच्छा मात्र है जिसे क़ानून बनाकर आपने सब के ऊपर लाद दिया है, एक ऐसी इच्छा जिसका मूलभूत स्वरूप और जिसकी दिशा आपके वर्ग के अस्तित्व की आर्थिक अवस्थाओं द्वारा निर्धारित होती है।

वह स्वार्थपूर्ण भ्रम, जो आपको उन सामाजिक रूपों को, जो आपकी मौजूदा उत्पादन प्रणाली और स्वामित्व के रूप द्वारा उत्पन्न होते हैं—उन ऐतिहासिक सम्बन्धों को जो उत्पादन के विकास के सिलसिले में उत्पन्न और विलीन होते हैं—प्रकृति और तर्कबुद्धि के शाश्वत नियमों में रूपान्तरित करने के लिए प्रेरित करता है, एक ऐसा भ्रम है जिसके शिकार आपके पूर्ववर्ती सभी शासक वर्ग होते आये हैं। प्राचीन युग के स्वामित्व के सम्बन्ध में जिस चीज़ को आप स्पष्टता से देखते हैं, सामन्ती स्वामित्व के सम्बन्ध में जिस चीज़ को आप स्वीकार करते हैं, उसे ख़ुद अपने पूंजीवादी स्वामित्व के सम्बन्ध में मंजूर करना आपके लिए निश्चय ही गुनाह है।

परिवार का विनाश! कम्युनिस्टों के इस कलंकपूर्ण प्रस्ताव से कट्टर से कट्टर उग्रवादी भी भड़क उठते हैं।

मौजूदा परिवार, पूंजीवादी परिवार, किस आधार पर खड़ा है? पूंजी पर, निजी फ़ायदे पर। अपने पूर्ण विकसित रूप में इस तरह का

परिवार केवल पूंजीपति वर्ग के बीच पाया जाता है। यह स्थिति अपना संपूरक सर्वहारा वर्ग में परिवार के व्यवहारतः अभाव और बाज़ारू वेश्यावृत्ति में पाती है।

यह संपूरक जब मिट जायेगा तो सामान्य क्रम में पूंजीवादी परिवार भी मिट जायेगा, और पूंजी के मिटने के साथ-साथ ये दोनों मिट जायेंगे।

क्या आप हमारे ऊपर यह आरोप लगाते हैं कि हम बच्चों का उनके माता-पिता द्वारा शोषण किया जाना बन्द कर देना चाहते हैं? इस अपराध को हम स्वीकार करते हैं।

लेकिन आप कहेंगे कि घरेलू शिक्षा की जगह पर सामाजिक शिक्षा क़ायम करके हम एक अत्यन्त पवित्र सम्बन्ध को नष्ट कर देते हैं।

और आपकी शिक्षा! क्या वह भी सामाजिक नहीं है और उन सामाजिक अवस्थाओं से निर्धारित नहीं होती है, जिनमें आप समाज के, प्रत्यक्ष या परोक्ष, हस्तक्षेप से स्कूलों आदि के ज़रिये शिक्षा देते हैं? शिक्षा में समाज का हस्तक्षेप कम्युनिस्टों की ईजाद नहीं है; कम्युनिस्ट तो केवल इस हस्तक्षेप के स्वरूप को बदल देना चाहते हैं और शासक वर्ग के प्रभाव से शिक्षा का उद्धार करना चाहते हैं।

जैसे-जैसे आधुनिक उद्योग की क्रिया द्वारा सर्वहारा वर्ग में समस्त पारिवारिक सम्बन्धों की धज्जियां उड़ती जा रही हैं और मज़दूरों के बच्चे तिजारत के मामूली सामान और श्रम के औज़ार बनते जा रहे हैं, वैसे-वसे परिवार और शिक्षा तथा माता-पिता और बच्चों के पुनीत अन्योन्य सम्बन्ध के बारे में पूंजीपतियों की बकवास और भी घिनौनी दिखाई देने लगती है।

लेकिन पूरा का पूरा पूंजीपति वर्ग गला फाड़कर एक स्वर से चिल्ला उठता है—तुम कम्युनिस्ट तो औरतों को सर्वोपभोग्य बना दोगे!

पूंजीपति अपनी पत्नी को उत्पादन के एक औज़ार के सिवा और कुछ नहीं समझता। उसने सुन रखा है कि कम्युनिस्ट समाज में उत्पादन के औज़ारों का सामूहिक रूप में उपयोग होगा। इसलिए, स्वभावतः, वह इसके अलावा और कोई निष्कर्ष नहीं निकाल पाता कि उस समाज में सभी चीज़ों की तरह औरतें भी सर्वोपभोग्य हो जायेंगी।

वह स्वप्न में भी नहीं सोच सकता कि दरअसल मक़सद यह है कि औरतों की उत्पादन के औज़ार जैसी स्थिति को ख़तम कर दिया जाये।

कुछ भी हो, स्त्रियों की सर्वोपभोग्यता के ख़िलाफ़ पूंजीपतियों के सदाचारी आक्रोश से अधिक हास्यास्पद दूसरी और कोई चीज़ नहीं है; वे यह समझने का वहाना करते हैं कि कम्युनिज़्म के अन्तर्गत स्त्रियों की सर्वोपभोग्यता खुल्लमखुल्ला और सरकारी तौर पर स्थापित की जायेगी। कम्युनिस्टों को स्त्रियों की सर्वोपभोग्यता स्थापित करने की कोई ज़रूरत नहीं है, क्योंकि वह बाबा आदम के ज़माने से चली आ रही है।

हमारे पूंजीपतियों को मज़दूरों की बहू-बेटियों को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ इस्तेमाल करने से संतोष नहीं होता, वेश्याओं से भी उनका मन नहीं भरता, इसलिए एक दूसरे की बीवियों पर हाथ साफ़ करने में उन्हें विशेष आनन्द प्राप्त होता है।

पूंजीवादी विवाह वास्तव में पत्नियों की साझेदारी की ही एक व्यवस्था है, इसलिए कम्युनिस्टों के ख़िलाफ़ अधिक से अधिक यही आरोप लगाया जा सकता है कि वे स्त्रियों की सर्वोपभोग्यता की मौजूदा ढोंगपूर्ण और गुप्त प्रथा को खुला, क़ानूनी रूप दे देना चाहते हैं। कुछ भी हो, बात अपने आप साफ़ है कि उत्पादन की वर्तमान व्यवस्था जब ख़तम हो जायेगी, तब स्त्रियों की उस व्यवस्था से उत्पन्न सर्वोपभोग्यता का, अर्थात् बाज़ारू और ख़ानगी, दोनों प्रकार की वेश्यावृत्ति का, अनिवार्यतः अन्त हो जायेगा।

कम्युनिस्टों पर यह आरोप भी लगाया जाता है कि वे स्वदेश और राष्ट्रीयता को मिटा देना चाहते हैं।

मज़दूरों का कोई स्वदेश नहीं है। जो उनके पास है ही नहीं उसे उनसे नहीं छीना जा सकता है। चूंकि सर्वहारा वर्ग को सबसे पहले राजनीतिक प्रभुत्व प्राप्त करना है, राष्ट्र में प्रधान वर्ग का स्थान ग्रहण करना है, ख़ुद अपने को राष्ट्र के रूप में संघटित करना है, अतः इस हद तक वह स्वयं राष्ट्रीय चरित्र रखता है, गोकि इस शब्द के पूंजीवादी अर्थ में नहीं।

पूंजीपति वर्ग के विकास, वाणिज्य की स्वाधीनता, विश्व बाज़ार और उत्पादन प्रणाली में तथा तदनुरूप जीवन की अवस्थाओं में एकरूपता के

कारण जनगण के राष्ट्रीय भेदभाव और विरोध दिनोंदिन मिटते जाते हैं।

सर्वहारा वर्ग का प्रभुत्व होने पर ये और भी तेज़ी से मिटेंगे। सर्वहारा वर्ग के निस्तार की पहली शर्त यह है कि कम से कम प्रमुख सभ्य देश मिलकर एकसाथ क़दम उठायें।

जिस अनुपात में एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति का शोषण ख़तम होगा, उसी अनुपात में एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र का शोषण भी ख़तम होगा।

जिस अनुपात में एक राष्ट्र के अन्दर वर्गों का विरोध ख़तम होगा, उसी अनुपात में राष्ट्रों का आपसी वैरभाव भी दूर होगा।

धार्मिक, दार्शनिक और सामान्यतः विचारधारात्मक दृष्टि से कम्युनिज़्म के ख़िलाफ़ जो आरोप लगाये जाते हैं, वे इस लायक़ नहीं हैं कि उनपर गंभीरता के साथ विचार किया जाये।

क्या यह समझने के लिए गहरी अन्तर्दृष्टि की ज़रूरत है कि मनुष्य के विचार, मत और उसकी धारणाएं—संक्षेप में उसकी चेतना—उसके भौतिक अस्तित्व की अवस्थाओं, उसके सामाजिक सम्बन्धों और सामाजिक जीवन के प्रत्येक परिवर्तन के साथ बदलती हैं?

विचारों का इतिहास इसके सिवा और क्या साबित करता है कि जिस अनुपात में भौतिक उत्पादन में परिवर्तन होता है, उसी अनुपात में बौद्धिक उत्पादन का स्वरूप परिवर्तित होता है? हर युग के प्रभुत्वशील विचार सदा उसके शासक वर्ग के ही विचार रहे हैं।

जब लोग समाज में क्रांति ला देनेवाले विचारों की बात करते हैं, तब वे केवल इस तथ्य को व्यक्त करते हैं कि पुराने समाज के अन्दर एक नये समाज के तत्त्व पैदा हो गये हैं और पुराने विचारों का विघटन अस्तित्व की पुरानी अवस्थाओं के विघटन के साथ क़दम मिलाकर चलता है।

प्राचीन दुनिया जिस समय अपनी अंतिम सांसें गिन रही थी, उस समय प्राचीन धर्मों को ईसाई धर्म ने पराभूत किया था। जब अठारहवीं शताब्दी में ईसाई मत तर्कबुद्धिवादी विचारों के सामने धराशायी हुआ, उस समय सामंती समाज ने तत्कालीन क्रांतिकारी पूंजीपति वर्ग से अपनी मौत की

लड़ाई लड़ी थी। धर्म और अन्तःकरण की स्वतंत्रता की बातें ज्ञान जगत् में मुक्त होड़ के प्रभुत्व को ही व्यक्त करती थीं।

कहा जायेगा कि "यह ठीक है कि इतिहास के विकासक्रम में धार्मिक, नैतिक, दार्शनिक, राजनीतिक और क़ानून सम्बन्धी विचार बदलते आये हैं; लेकिन धर्म, नैतिकता, दर्शन, राजनीति और क़ानून तो सदा इस परिवर्तन से बचे रहे हैं।

"इसके अलावा स्वाधीनता, न्याय, आदि ऐसे शाश्वत सत्य भी हैं जो हर सामाजिक अवस्था में समान रूप से लागू होते हैं। लेकिन उन्हें नये आधार पर प्रतिष्ठित करने के बजाय कम्युनिज़्म सभी शाश्वत सत्यों को ख़तम कर देता है, वह समस्त धर्म और समस्त नैतिकता को मिटा देता है; इसलिए कम्युनिज़्म विगत इतिहास के समस्त अनुभव के विपरीत आचरण करता है।"

इस आरोप का सारतत्त्व क्या है? पिछले प्रत्येक समाज का इतिहास वर्ग विरोधों के विकास का इतिहास है, उन वर्ग विरोधों का, जिन्होंने भिन्न युगों में भिन्न रूप धारण किया था।

पर उन्होंने चाहे जो भी रूप धारण किया हो, पिछले सभी युगों में एक चीज़ हर अवस्था में मौजूद थी—समाज के एक हिस्से द्वारा दूसरे हिस्से का शोषण। अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि विगत युगों की सामाजिक चेतना अनेकानेक विविधता और विभिन्नता के बावजूद किन्हीं ऐसे सामान्य रूपों या सामान्य विचारों के दायरे में गतिशील रही है, जो वर्ग विरोधों के पूर्ण रूप से विलुप्त होने के पहले पूरी तरह नहीं मिट सकते।

कम्युनिस्ट क्रांति समाज के परम्परागत स्वामित्व सम्बन्धों से आमूल विच्छेद है; फिर इसमें आश्चर्य क्या कि इस क्रांति के विकास का अर्थ है समाज के परम्परागत विचारों से आमूल सम्बन्ध विच्छेद?

लेकिन कम्युनिज़्म के ख़िलाफ़ पूंजीपतियों के आरोपों की कथा अब समाप्त की जाये।

ऊपर हम देख आये हैं कि मज़दूर वर्ग की क्रांति का पहला क़दम सर्वहारा वर्ग को ऊपर उठाकर शासक वर्ग के आसन पर बैठाना और जनवाद के लिए होनेवाली लड़ाई को जीतना है।

सर्वहारा वर्ग अपना राजनीतिक प्रभुत्व पूंजीपति वर्ग से धीरे-धीरे कर सारी पूंजी छीनने के लिए, उत्पादन के सारे औज़ारों को राज्य, अर्थात् शासक वर्ग के रूप में संगठित सर्वहारा वर्ग, के हाथों में केन्द्रीकृत करने के लिए तथा समग्र उत्पादक शक्तियों में यथाशीघ्र वृद्धि के लिए इस्तेमाल करेगा।

निस्संदेह, आरम्भ में, यह काम स्वामित्व के अधिकारों पर, और पूंजीवादी उत्पादन की अवस्थाओं पर निरंकुश हमलों के बिना नहीं हो सकता; अतः ऐसे उपायों के बिना नहीं हो सकता जो आर्थिक दृष्टि से अपर्याप्त और अव्यावहारिक प्रतीत होते हैं, पर जो विकासक्रम में अपनी सीमा को लांघ जायेंगे, पुरानी समाज व्यवस्था के और भी गहन भेदन को अनिवार्य बना देंगे और जो उत्पादन प्रणाली में पूर्णतया क्रांति लाने के साधन के रूप में अनिवार्य होंगे।

निस्संदेह, भिन्न-भिन्न देशों में ये उपाय भिन्न-भिन्न होंगे।

फिर भी नीचे दिये हुए तरीक़े सबसे आगे बढ़े हुए देशों में आम तौर से लागू हो सकेंगे:

१. भू-स्वामित्व का उन्मूलन और समस्त लगान का सार्वजनिक प्रयोजन के लिए उपयोग।

२. भारी वर्द्धमान या आरोही आय-कर।

३. उत्तराधिकार का उन्मूलन।

४. सभी उत्प्रवासियों और विद्रोहियों की सम्पत्ति की ज़ब्ती।

५. सरकारी पूंजी और पूर्ण एकाधिकार से संपन्न राष्ट्रीय बैंक द्वारा राज्य के हाथ में उधार का केन्द्रीकरण।

६. संचार और यातायात के साधनों का राज्य के हाथों में केन्द्रीकरण।

७. राजकीय कारख़ानों और उत्पादन के औज़ारों का विस्तार करना; एक आम योजना बनाकर परती ज़मीन को जोतना और खेत की मिट्टी का सामान्यतः सुधार करना।

८. हर एक के लिए काम करना समान रूप से अनिवार्य किया जाना। विशेषकर कृषि के लिए औद्योगिक सेनाएं क़ायम करना।

९. उद्योग और कृषि को मिलाना; धीरे-धीरे देहातों और शहरों का अंतर मिटा देना।

१०. सार्वजनिक पाठशालाओं में तमाम बच्चों के लिए मुफ़्त शिक्षा व्यवस्था। वर्तमान रूप में बच्चों से कारख़ानों में काम लेना ख़तम कर देना। शिक्षा और औद्योगिक उत्पादन को मिलाना, आदि।

विकासक्रम में जब वर्गों के भेद मिट जायेंगे और सारा उत्पादन पूरे राष्ट्र के एक विशाल संघ के हाथ में संकेन्द्रित हो जायेगा, तब सार्वजनिक सत्ता अपना राजनीतिक स्वरूप खो देगी। राजनीतिक सत्ता, इस शब्द के असली अर्थ में, एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का उत्पीड़न करने की संगठित शक्ति ही है। पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ अपने संघर्ष के दौरान, परिस्थितियों से मजबूर होकर सर्वहारा को यदि अपने को एक वर्ग के रूप में संगठित करना पड़ता है, यदि क्रांति के ज़रिये वह स्वयं अपने को शासक वर्ग बना लेता है, और इस तरह उत्पादन की पुरानी अवस्थाओं का बलपूर्वक अन्त कर देता है, तो उन अवस्थाओं के साथ-साथ वह वर्ग विरोधों के अस्तित्व और, आम तौर पर, ख़ुद वर्गों की अवस्थाओं का ख़ात्मा कर देता है और इस प्रकार वह एक वर्ग के रूप में स्वयं अपने प्रभुत्व का भी ख़ात्मा कर देता है।

तब वर्गों और वर्ग विरोधों से बिंधे पुराने समाज के स्थान पर एक ऐसे संघ की स्थापना होगी जिसमें व्यष्टि की स्वतंत्र प्रगति समष्टि की स्वतंत्र प्रगति की शर्त होगी।

३

समाजवादी और कम्युनिस्ट साहित्य

१. प्रतिक्रियावादी समाजवाद

क) सामन्ती समाजवाद

फ़्रांस और इंगलैंड के अभिजातों की ऐतिहासिक स्थिति ऐसी थी कि आधुनिक पूंजीवादी समाज के ख़िलाफ़ पैंफ़्लेट लिखना उनका पेशा बन गया। जुलाई १८३० की फ़्रांसीसी क्रांति में और इंगलैंड के सुधार आंदोलन[30] में ये अभिजात पुनः इन घृणास्पद नवप्रतिष्ठित अनभिजातों द्वारा पराभूत हुए। उसके बाद कोई महत्त्वपूर्ण राजनीतिक लड़ाई लड़ने की सम्भावना न रह गयी। केवल साहित्यिक लड़ाई ही अब सम्भव थी। लेकिन साहित्य के क्षेत्र में भी पुनःस्थापन काल* के पुराने नारों का प्रयोग असंभव हो गया था।

लोगों की सहानुभूति हासिल करने के लिए इन अभिजातों को बाह्यतः अपने हितों को आंखों से ओझल करना पड़ा और केवल शोषित मज़दूर वर्ग के हित को लेकर उन्होंने पूंजीपतियों के विरुद्ध अपना अभियोग पत्र तैयार किया। चुनांचे अभिजात वर्ग ने अपने नये प्रभु के ख़िलाफ़ विद्रूपात्मक रचनाएं लिखकर और उसके कानों में उसके आनेवाले सर्वनाश की भयानक भविष्योक्तियां फुसफुसाकर उससे अपना बदला लिया।

सामन्ती समाजवाद की उत्पत्ति इसी तरह हुई: कुछ रोना-धोना, कुछ विद्रूपात्मक रचनाओं के तीर चलाना; कुछ अतीत को प्रतिध्वनित करना, कुछ भविष्य का भय दिखाना; कभी-कभी अपनी कटु व्यंग्यपूर्ण और पैनी

---

*इंगलैंड में १६६० से १६८९ का पुनःस्थापन काल नहीं, बल्कि फ़्रांस में १८१४ से १८३० का पुनःस्थापन काल। (१८८८ के अंग्रेजी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

आलोचना द्वारा पूंजीपतियों के मर्मस्थल को चोट पहुंचाना; किन्तु आधुनिक इतिहास की प्रगति को हृदयंगम करने में अपनी संपूर्ण असमर्थता के कारण अपने प्रभाव में सदा हास्यास्पद रह जाना।

जनता को अपनी तरफ़ करने के लिए इन अमीर-उमरा ने सर्वहारा वर्ग की भीख की झोली को अपना झंडा बनाया। लेकिन जब-जब जनता उनके साथ हुई, उसने देखा कि उनके कूल्हों पर अभिजातों के वंश-चिह्नों के ठप्पे लगे हुए हैं, और वह हंसी के ज़ोरदार ठहाकों से उनका अपमान करती हुई उन्हें छोड़कर चल दी।

फ़्रांसीसी लेजिटिमिस्टों के एक हिस्से और "तरुण इंगलैंड"[31] ने यही नज़ारा पेश किया।

यह कहते समय कि उनके शोषण का तरीक़ा पूंजीपति वर्ग के शोषण के तरीक़े से भिन्न था, सामन्तवादी भूल जाते हैं कि जिन परिस्थितियों और अवस्थाओं में वे शोषण करते थे, वे बिलकुल भिन्न थीं और अब पुरानी पड़ चुकी थीं। यह साबित करते समय कि उनके शासन में आधुनिक सर्वहारा वर्ग का कोई अस्तित्व नहीं था, वे भूल जाते हैं कि आधुनिक पूंजीपति वर्ग उन्हीं की सामाजिक व्यवस्था की अनिवार्य सन्तान है।

कुछ भी हो, अपनी आलोचना के प्रतिक्रियावादी स्वरूप को वे इतना कम छिपाते हैं कि पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ उनका सबसे बड़ा इलज़ाम यह होता है कि पूंजीवादी शासन में एक ऐसा वर्ग पनप रहा है जो पुरानी समाज व्यवस्था को समूल उखाड़कर फेंक देगा।

पूंजीपति वर्ग को उनका उलाहना इतना इस बात के लिए नहीं है कि वह सर्वहारा वर्ग को उत्पन्न कर रहा है, जितना इस बात के लिए कि वह क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग को जन्म दे रहा है।

इसलिए, अपने राजनीतिक व्यवहार में वे मज़दूर वर्ग के ख़िलाफ़ प्रयोग की जानेवाली तमाम दमनकारी कार्रवाइयों का समर्थन करते हैं, और अपनी बड़ी-बड़ी डींगों के बावजूद रोज़मर्रा के जीवन में उद्योग के कल्पवृक्ष से गिरे सोने के फलों को बीनने के लिए और ऊन, चुक़न्दर

की चीनी तथा आलू की बनी स्पिरिट* के व्यापार के लिए वे सत्य, प्रेम और सम्मान का सौदा करने के लिए सदैव तैयार रहते हैं।

जिस तरह पादरी और ज़मींदार का चोली-दामन का साथ रहा है, उसी तरह पादरी समाजवाद और सामन्ती समाजवाद दोनों जन्म के साथी हैं।

ईसाइयों की वैराग्य भावना को समाजवाद का रंग दे देने से अधिक आसान काम दूसरा नहीं है। क्या ईसाई धर्म निजी स्वामित्व, विवाह और राज्य के ख़िलाफ़ फ़तवे नहीं देता रहा है? इन चीज़ों के बदले क्या उसने दानपुण्य और ग़रीबी, ब्रह्मचर्य और शारीरिक तप, मठ-निवास और मातृ गिरजाघर की शरण लेने का उपदेश नहीं दिया है? ईसाई समाजवाद केवल वह पवित्र जल है जिसकी छींट मारकर पादरी अमीर-उमरा के संतप्त हृदयों का पवित्रीकरण करता है।

ख) निम्न-पूंजीवादी समाजवाद

सामन्ती अभिजात वर्ग अकेला वर्ग नहीं है जिसे पूंजीपति वर्ग ने बरबाद किया, वही एकमात्र वर्ग नहीं है जिसके अस्तित्व की अवस्थाएं आधुनिक पूंजीवादी समाज के वातावरण में घुटकर रह गयी हैं और मर-मिटी हैं। मध्ययुग के बर्गर और छोटे किसान भू-स्वामी आधुनिक पूंजीपति वर्ग के पूर्वज थे। उन देशों में, जो उद्योग और वाणिज्य की दृष्टि से

---

*यह मुख्यतया जर्मनी पर लागू होता है जहां भू-सम्पत्तिधारी रईस और सामन्त अपनी जमीन के बहुत बड़े हिस्से पर अपने प्रवन्धकर्त्ताओं के ज़रिये खेती कराते हैं, और इसके अलावा बड़े पैमाने पर चुक़न्दर से चीनी बनाने और आलू से स्पिरिट बनाने का भी रोज़गार करते हैं। ब्रिटेन के अधिक धनिक रईस अभी तक इस हद तक नहीं गिरे हैं, लेकिन वे भी समझ गये हैं कि किस तरह न्यूनाधिक संदिग्ध ज्वाइंट स्टाक कम्पनियों के प्रवर्त्तकों में अपना नाम देकर लगान की घटती हुई आमदनी को पूरा किया जाये। (१८८८ के अंग्रेजी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

अल्पविकसित हैं, ये दोनों वर्ग अब भी उदीयमान पूंजीपति वर्ग के साथ पनप रहे हैं।

उन देशों में जहां आधुनिक सभ्यता का पूरा विकास हो चुका है, निम्न-पूंजीपतियों का एक नया वर्ग बन गया है जो सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच झूला करता है और पूंजीवादी समाज के एक पूरक अंग के रूप में सदा अपने को ताज़ा करता रहता है। लेकिन होड़ की चक्की में पिसकर इस वर्ग के अलग-अलग सदस्य टूट-टूट कर बराबर सर्वहारा वर्ग में शामिल होते जाते हैं; और आधुनिक उद्योग का विकास होने के साथ वे उस क्षण को भी नज़दीक आता देखते हैं जब आधुनिक समाज के एक स्वतंत्र अंग के रूप में उनका बिलकुल ख़ातमा हो जायेगा और उद्योग, खेती और वाणिज्य के क्षेत्र में ओवरसीयर, नाज़िर और दूकान-कर्मचारी उनका स्थान ले लेंगे।

फ़्रांस जैसे देशों में, जहां आधी से कहीं अधिक आबादी किसानों की है, यह स्वाभाविक था कि जो लेखक पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ सर्वहारा वर्ग का साथ देते थे, वे पूंजीवादी शासन व्यवस्था की अपनी आलोचना में किसानों और निम्न-पूंजीपतियों के मानदण्ड का प्रयोग करते और मज़दूर वर्ग के समर्थन में इन्हीं मध्यम वर्गों के दृष्टिकोण से आवाज़ उठाते। निम्न-पूंजीवादी समाजवाद की उत्पत्ति इसी तरह हुई। न केवल फ़्रांस में, बल्कि इंगलैंड में भी इस मत के नेता सीसमांदी[32] थे।

समाजवाद की इस शाखा के अनुयायियों ने आधुनिक उत्पादन की अवस्थाओं के अन्तर्विरोधों का बहुत ही बारीकी के साथ विश्लेषण किया। अर्थशास्त्रियों की ढोंगपूर्ण वकालतों का उन्होंने पर्दाफ़ाश किया। मशीनों के उपयोग और श्रम विभाजन के विनाशकारी परिणाम, पूंजी और भूमि का मुट्ठी भर लोगों के हाथों में संकेन्द्रित होना, अति-उत्पादन और संकट, इन सब को उन्होंने अकाट्य रूप से प्रमाणित किया; उन्होंने निम्न-पूंजीपतियों और किसानों की बरबादी की अवश्यम्भाविता, सर्वहारा वर्ग की दुर्दशा, उत्पादन में अराजकता, धन के वितरण में घोर असमानता, एक दूसरे को ख़तम कर देने के लिए राष्ट्रों के बीच औद्योगिक युद्ध, पुराने नैतिक बंधनों के विच्छेदन, पुराने पारिवारिक सम्बन्धों और पुरानी जातियों के विघटन की ओर इशारा किया।

किन्तु अपने सकारात्मक उद्देश्यों में इस तरह का समाजवाद या तो यह चाहता है कि उत्पादन और विनिमय के पुराने साधनों को, और उनके साथ पुराने स्वामित्व सम्बन्धों को और पुराने समाज को फिर से क़ायम कर दिया जाये, या उत्पादन और विनिमय के आधुनिक साधनों को उन्हीं पुराने स्वामित्व सम्बन्धों के शिकंजे में कस दिया जाये जिन्हें उन्होंने तोड़ दिया था और जिनका इन साधनों के ज़रिये टूटना अनिवार्य था। हर सूरत में यह समाजवाद प्रतिक्रियावादी और कल्पनावादी दोनों है।

उसके अंतिम शब्द हैं: उद्योग को चलाने के लिए निगमित शिल्प-संघ बनाये जायें और खेती में पितृसत्तात्मक सम्बन्ध क़ायम हों।

अन्त में जब कठोर ऐतिहासिक तथ्यों ने आत्मवंचना का नशा उतार दिया, तो समाजवाद का यह रूप ख़ुमारी के दौरे में ख़तम हो गया।

ग) जर्मन, या "सच्चा" समाजवाद

फ़्रांस का समाजवादी और कम्युनिस्ट साहित्य, वह साहित्य जो शासनारूढ़ पूंजीपति वर्ग के दबाव में पैदा हुआ था, और जो उसके ख़िलाफ़ होनेवाले संघर्ष की अभिव्यक्ति था, जर्मनी में उस समय लाया गया जब उस देश में सामन्ती निरंकुशता के ख़िलाफ़ वहां के पूंजीपति वर्ग ने अभी-अभी अपनी लड़ाई शुरू की थी।

जर्मनी के दार्शनिकों, अधकचरे दार्शनिकों और साहित्यिक प्रवृत्ति के लोगों ने उस साहित्य को बड़ी उत्सुकता के साथ अपनाया; वे केवल यह भूल गये कि जब वह साहित्य फ़्रांस से जर्मनी आया था तो उसके साथ फ़्रांस की सामाजिक परिस्थितियां नहीं आई थीं। जर्मनी की सामाजिक अवस्थाओं के सम्पर्क में इस फ़्रांसीसी साहित्य ने अपना सारा तात्कालिक व्यावहारिक महत्त्व खो दिया और विशुद्ध साहित्यिक रूप ग्रहण कर लिया। चुनांचे अठारहवीं शताब्दी के जर्मन दार्शनिकों की निगाह में पहली फ़्रांसीसी क्रान्ति की मांगें "व्यावहारिक तर्कबुद्धि" की सामान्य मांगों के अलावा और कुछ न थीं और क्रान्तिकारी फ़्रांसीसी पूंजीपति वर्ग की इच्छा की

अभिव्यक्ति उनकी दृष्टि में शुद्ध इच्छा, अपरिहार्य इच्छा, सामान्यतः सच्ची मानवीय इच्छा के नियमों का द्योतक थी।

जर्मन साहित्यकारों का एकमात्र काम यह था कि वे फ़्रांस के इन नये विचारों का अपने प्राचीन दार्शनिक विवेक के साथ सामंजस्य स्थापित करें, या यूं कहिये कि अपने दार्शनिक दृष्टिकोण को छोड़े बिना इन फ़्रांसीसी विचारों को अपना लें।

अपना लेने का यह काम उसी तरह पूरा किया गया जिस तरह कि किसी विदेशी भाषा को आत्मसात् किया जाता है, यानी अनुवाद के ज़रिये।

सुविदित है कि भिक्षुगण किस प्रकार उन पाण्डुलिपियों के ऊपर, जिनमें प्राचीन मूर्त्तिपूजकों के शास्त्रीय ग्रंथ लिखे हुए थे, कैथोलिक संतों की फूहड़ जीवनियां लिखा करते थे। जर्मन साहित्यकारों ने अपवित्र फ़्रांसीसी साहित्य के संबंध में इस क्रिया को उलट दिया। अपनी दार्शनिक बकवास को उन्होंने मूल फ़्रांसीसी कृतियों की पुश्त पर लिखा। उदाहरण के लिए, मुद्रा की आर्थिक क्रियाओं की फ़्रांसीसी आलोचना की पुश्त पर उन्होंने लिखा "मानवता का विच्छेद" और पूंजीवादी राज्य की फ़्रांसीसी आलोचना की पुश्त पर "सामान्य के प्रवर्ग का सत्ताच्युत किया जाना", आदि, आदि।

फ़्रांसीसी ऐतिहासिक समालोचनाओं की पुश्त पर इन दार्शनिक उक्तियों की प्रस्तावनाओं को उन्होंने "कर्म दर्शन", "सच्चा समाजवाद", "समाजवाद का जर्मन विज्ञान", "समाजवाद का दार्शनिक आधार", आदि भारी-भरकम नाम दिया।

इस तरह फ़्रांसीसी समाजवादी और कम्युनिस्ट साहित्य बिलकुल शक्तिहीन बना दिया गया। और, चूंकि जर्मनों के हाथ में पड़कर उसने एक वर्ग के विरुद्ध दूसरे वर्ग के संघर्ष को अभिव्यक्त करना छोड़ दिया, इसलिए उन्हें ऐसा बोध हुआ कि उन्होंने "फ़्रांसीसी एकांगीपन" पर क़ाबू पा लिया है और सच्ची आवश्यकताओं का नहीं, बल्कि सच्चाई की आवश्यकताओं का प्रतिनिधित्व किया है; सर्वहारा वर्ग के हितों का नहीं, बल्कि मानव स्वभाव के हितों का, मनुष्य मात्र के हितों का प्रतिनिधित्व

किया है जो किसी वर्ग का नहीं है, जिसका कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है, जो केवल हवाई दार्शनिक कल्पना लोक का प्राणी है।

इस जर्मन समाजवाद ने, जिसने स्कूली बच्चे के से अपने कार्यभार को इतनी संजीदगी और सत्यनिष्ठा के साथ ग्रहण किया था और अपनी "फीके पकवान वाली ऊंची दूकान" का ढिंढोरा पीटा था, धीरे-धीरे अपना निरीह पांडित्य त्याग दिया।

सामन्ती अमीर-उमरा और निरंकुश राजतंत्र के ख़िलाफ़ जर्मन पूंजीपति वर्ग का, और ख़ास तौर से प्रशा के पूंजीपति वर्ग का संघर्ष—दूसरे शब्दों में, उदारतावादी आंदोलन—अधिक गंभीर बन गया।

इससे "सच्चे" समाजवादियों को दीर्घकाल से वांछित यह मौक़ा मिला कि राजनीतिक आंदोलन के सामने वे अपनी समाजवादी मांगें रखें—उदारतावाद, प्रतिनिधिमूलक सरकार, पूंजीवादी होड़, पूंजीवादी प्रेस स्वातन्त्र्य, पूंजीवादी क़ानून, पूंजीवादी स्वतंत्रता और समानता, आदि को परम्परागत लानतें भेजें और जनसाधारण को बतायें कि इस पूंजीवादी आंदोलन से उन्हें कोई फ़ायदा नहीं होगा, बल्कि नुक़सान ही नुक़सान होगा। जर्मन समाजवाद ने बड़े मौक़े से इस बात को भुला दिया कि फ़्रांसीसी मीमांसा, जिसकी वह एक बेहूदा प्रतिध्वनि मात्र था, आधुनिक पूंजीवादी समाज के अस्तित्व की—उसके अस्तित्व की आर्थिक परिस्थितियों की और उसके अनुरूप ढले राजनीतिक विधान की, अर्थात् ठीक उन्हीं चीज़ों की पूर्वकल्पना करके चलती है, जिनकी प्राप्ति जर्मनी में अभी तक अनिर्णीत संघर्ष का लक्ष्य था।

निरंकुश सरकारों को, उनके पादरियों, प्रोफ़ेसरों, देहाती सामन्तों और नौकरशाहों को ख़तरनाक पूंजीपतियों के ख़िलाफ़ इस समाजवाद के रूप में एक मनचाहा हौआ मिल गया।

हंटरों और गोलियों की कड़वी ख़ुराक के बाद, जो इन्हीं सरकारों ने उस समय जर्मनी के विद्रोही मज़दूरों को पिलायी थी, अन्त में यह एक मीठी गोली थी।

इस प्रकार जहां यह "सच्चा" समाजवाद जर्मन पूंजीपतियों के ख़िलाफ़ लड़ाई में सरकारों का अस्त्र बन गया, वहीं प्रत्यक्ष रूप से उसने एक

प्रतिक्रियावादी स्वार्थ, जर्मन कूपमंडूकों के स्वार्थ का प्रतिनिधित्व किया। जर्मनी में निम्न-पूंजीपति वर्ग ही, जो सोलहवीं शताब्दी का एक अवशेष है और तब से वारम्वार विभिन्न रूप धारण करके प्रगट होता रहा है, वहां की वर्तमान अवस्था का वास्तविक सामाजिक आधार है।

इस वर्ग को बरक़रार रखना जर्मनी की वर्तमान अवस्था को बरक़रार रखना है। पूंजीपति वर्ग का औद्योगिक और राजनीतिक प्रभुत्व, एक ओर तो पूंजी के संकेन्द्रण द्वारा और दूसरी ओर क्रांतिकारी सर्वहारा वर्ग के उदय द्वारा, उसके निश्चित विनाश का ख़तरा पैदा करता है। लगता था कि "सच्चा" समाजवाद एक ही तीर से इन दोनों चिड़ियों को ख़तम कर देगा। अतः "सच्चा" समाजवाद एक महामारी की तरह फैल गया।

जर्मन समाजवादियों ने अपने करुणाजनक "शाश्वत सत्यों" की ठठरी को जब कल्पनामय भावों के झीने आवरण में लपेटा, इस आवरण में आलंकारिक भाषा रूपी फूलदार सलमे सितारों की क़सीदाकारी की, और उसे रुग्ण भावुकता के नीहार-जल में भिगोकर बाज़ारों में ले आये, तो फिर क्या कहना था, ऐसे ख़रीदारों के बीच उनके इस माल की ख़ूब खपत हुई।

अपनी ओर से जर्मन समाजवाद ने निम्न-पूंजीवादी कूपमण्डूक के आडंबरपूर्ण प्रतिनिधि होने के अपने पेशे को अधिकाधिक स्वीकार किया।

जर्मन समाजवादियों ने घोषणा की कि जर्मन राष्ट्र ही आदर्श राष्ट्र है और जर्मनी का तुच्छ कूपमण्डूक ही आदर्श मानव है। इस आदर्श मानव की हर अपराधपूर्ण नीचता की उन्होंने एक रहस्यमय, उच्च, समाजवादी व्याख्या की—असलियत के विलकुल विपरीत व्याख्या। अंत में तो वे कम्युनिज़्म की "पाशविक विनाशकारी" प्रवृत्ति का सीधे-सीधे विरोध करने और तमाम वर्ग संघर्षों के प्रति अपनी घोर, पक्षपातहीन अवज्ञा घोषित करने की पराकाष्ठा तक पहुंच गये। जर्मनी में आजकल (१८४७) समाजवादी और कम्युनिस्ट साहित्य के नाम से जिन चीज़ों का प्रचार हो रहा है, उनमें से बहुत थोड़े को छोड़कर बाक़ी सब इसी गंदे और क्षयकारी साहित्य की कोटि में आते हैं।*

---

*सन् १८४८ की क्रांतिकारी आंधी ने इस पूरी लीचड़ प्रवृत्ति का

२. दक़ियानूसी, या पूंजीवादी समाजवाद

पूंजीपति वर्ग का एक हिस्सा समाज की बुराइयों को दूर करना चाहता है जिससे कि पूंजीवादी समाज को बरक़रार रखा जा सके।

अर्थशास्त्री, दानवीर, मानवतावादी, श्रमजीवी वर्गों के जीवन-यापन की अवस्थाओं के सुधारक, ख़ैरा तबंटवाने के प्रबंधकर्त्ता, पशु-रक्षा समितियों के सदस्य, शराबबन्दी के कट्टर समर्थक, प्रत्येक कल्पनीय प्रकार के छोटे-मोटे सुधारक—सभी इस श्रेणी में आते हैं। इसके अलावा, इस तरह के समाजवाद का पूरी की पूरी पद्धतियों के रूप में विशदीकरण किया गया है।

समाजवाद के इस रूप के उदाहरण के रूप में हम प्रूदों की पुस्तक «*Philosophie de la Misére*» (दरिद्रता का दर्शन) को ले सकते हैं।

पूंजीवादी समाजवादी समाज की आधुनिक अवस्थाओं का पूरा लाभ उठाना चाहते हैं, लेकिन उनके द्वारा अनिवार्यतः उत्पन्न संघर्षों और ख़तरों से दूर रहकर ही। वे मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को चाहते हैं, लेकिन बग़ैर उसके क्रांतिकारी और विघटक तत्त्वों के ही; वे चाहते हैं कि पूंजीपति वर्ग हो, लेकिन सर्वहारा न हो। पूंजीपति वर्ग जिस दुनिया में सर्वेसर्वा है स्वभावतः वह उसी को सर्वश्रेष्ठ मानता है; पूंजीवादी समाजवाद इसी सुखद अवधारणा को कमोवेश पूरी पद्धतियों का रूप दे देता है। इसलिए पूंजीवादी समाजवादी जब सर्वहारा से यह अपेक्षा करते हैं कि वह इस तरह की पद्धति क़ायम करेगा और ऐसा करके सीधे नये येरूशलम में पहुंच जायेगा तो दरअसल वे यह अपेक्षा करते हैं कि सर्वहारा वर्ग वर्तमान समाज की सीमाओं का उल्लंघन न करे और पूंजीपति वर्ग के बारे में अपनी तमाम घृणापूर्ण भावनाओं को तिलांजलि दे।

सफ़ाया कर दिया और उसके समर्थकों की समाजवाद में टांग अड़ाने की इच्छा को दूर कर दिया। इस प्रवृत्ति का प्रमुख और प्रतिष्ठित प्रतिनिधि हेर कार्ल ग्रून[33] था। (१८९० के जर्मन संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

इस समाजवाद का एक दूसरा, अधिक व्यावहारिक परन्तु कम व्यवस्थित रूप वह है जो प्रत्येक क्रान्तिकारी आन्दोलन को मज़दूर वर्ग की दृष्टि में यह दिखाकर गिराना चाहता है कि उसे मात्र राजनीतिक सुधारों द्वारा नहीं, अपितु जीवन की भौतिक अवस्थाओं, आर्थिक सम्बन्धों में परिवर्तन द्वारा ही कोई लाभ हो सकता है। लेकिन जीवन की भौतिक अवस्थाओं में परिवर्तन से इस समाजवाद का मतलब यह कदापि नहीं है कि उत्पादन के पूंजीवादी सम्बन्धों को समाप्त कर दिया जाये, जिसे क्रान्ति के ज़रिये ही समाप्त किया जा सकता है, बल्कि उसका मतलब इन्हीं सम्बन्धों पर आधारित प्रशासकीय सुधारों से है, अर्थात् ऐसे सुधारों से जो किसी हालत में पूंजी और श्रम के सम्बन्धों में परिवर्तन नहीं लाते और ज़्यादा से ज़्यादा पूंजीवादी सरकार का प्रशासन ख़र्च कम कर देते हैं और उसके प्रशासकीय कार्यों को कुछ सरल बना देते हैं।

पूंजीवादी समाजवाद पर्याप्त अभिव्यक्ति तभी प्राप्त करता है जब वह केवल भाषा का एक अलंकार बन जाता है, अन्यथा नहीं।

मुक्त व्यापार: मज़दूर वर्ग की भलाई के लिए। संरक्षण शुल्क: मज़दूर वर्ग की भलाई के लिए। जेल-सुधार: मज़दूर वर्ग की भलाई के लिए। पूंजीवादी समाजवाद का यही हर्फ़े-आख़िर है, बस यही एक हर्फ़ है जिसे वह संजीदगी से मानता है।

उसका लुब्बे लुबाब इस मुहावरे में है: पूंजीपति—पूंजीपति है मज़दूर वर्ग की भलाई के लिए।

३. आलोचनात्मक-कल्पनावादी समाजवाद और कम्युनिज़्म

यहां पर हम बाब्योफ़[34] और दूसरे लेखकों की कृतियों की तरह के उस साहित्य की चर्चा नहीं कर रहे हैं जिसने प्रत्येक महान् आधुनिक क्रांति में सर्वहारा वर्ग की मांगों को सदा मुखरित किया है।

अपने वर्ग लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सर्वहारा की पहली सीधी-सीधी कोशिशें सार्वभौमिक उत्तेजना के काल में की गयी थीं, जब सामन्ती

समाज का तख़्ता उल्टा जा रहा था। सर्वहारा की उस समय की अविकसित अवस्था के कारण, और साथ ही उसकी मुक्ति के लिए आवश्यक आर्थिक अवस्थाओं के अभाव के कारण—उन अवस्थाओं के, जिन्हें अभी उत्पन्न होना था और जो आसन्न पूंजीवादी युग द्वारा ही उत्पन्न हो सकती थीं—इन कोशिशों का असफल होना अनिवार्य था। सर्वहारा वर्ग के इन प्रथम आंदोलनों के साथ-साथ जो क्रांतिकारी साहित्य सृजित हुआ, उसका अनिवार्यतः प्रतिक्रियावादी चरित्र था। उसने सार्वभौमिक वैराग्य और भोंडे से भोंडे रूप में सामाजिक समतलन की भावनाएं पैदा कीं।

सेंट-साइमन, फ़ूरिये, ओवेन[35] तथा दूसरे लोगों की पद्धतियों का जन्म—जिन्हें वास्तव में समाजवादी और कम्युनिस्ट पद्धतियां कहा जा सकता था—सर्वहारा और पूंजीपति वर्ग के संघर्ष के उपरोक्त आरम्भिक अविकसित काल में हुआ था (देखिये "पूंजीपति और सर्वहारा")।

इसमें सन्देह नहीं कि इन पद्धतियों के संस्थापक तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में वर्ग विरोधों तथा विघटनशील तत्त्वों की क्रिया को देखते थे। किन्तु उनकी दृष्टि में सर्वहारा, जो अभी अपने शैशव काल में था, ऐसा वर्ग था जिसमें न तो ऐतिहासिक पेशक़दमी थी और न ही स्वतंत्र राजनीतिक आन्दोलन की कोई क्षमता थी।

चूंकि वर्ग विरोध का विकास उद्योग के विकास के साथ क़दम मिलाकर चलता है, इसलिए वे उस समय जैसी आर्थिक स्थिति पाते हैं, वह अभी उन्हें सर्वहारा की मुक्ति के लिए आवश्यक भौतिक अवस्थाएं प्रदान नहीं करती। इसलिए वे इन अवस्थाओं को उत्पन्न करने में समर्थ नये सामाजिक विज्ञान की, नये सामाजिक नियमों की तलाश करते हैं।

उन्होंने चाहा कि ऐतिहासिक क्रिया का स्थान उनकी व्यक्तिगत आविष्कारक क्रिया ले ले; इतिहास द्वारा पैदा होनेवाली सर्वहारा की मुक्ति की अवस्थाओं का काम उनकी कल्पित अवस्थाएं पूरा कर दें; सर्वहारा के धीरे-धीरे और स्वतः पैदा होनेवाले वर्ग संगठन का काम इन आविष्कारकों द्वारा विशेष तौर से आविष्कृत एक समाज संगठन कर दे। उनकी दृष्टि में भावी इतिहास उनकी सामाजिक योजनाओं का प्रचार और उनका व्यावहारिक क्रियान्वयन मात्र बन जाता है।

अपनी योजनाएं तैयार करते हुए, उन्हें सर्वाधिक पीड़ित वर्ग होने के नाते सबसे ज्यादा मज़दूर वर्ग के हितों का ख़याल रहता है। उनकी दृष्टि में सर्वहारा के अस्तित्व का केवल एक ही अर्थ है—सर्वाधिक पीड़ित वर्ग।

वर्ग संघर्ष की अविकसित अवस्था और स्वयं अपने परिवेश के कारण इस तरह के समाजवादी अपने को तमाम वर्ग विरोधों से बहुत ऊपर समझते हैं। समाज के प्रत्येक सदस्य की, सबसे अधिक सम्पन्न सदस्यों की भी, हालत को वे बेहतर बनाना चाहते हैं। इसलिए वे आदतन वर्ग भेद का लिहाज़ किये बिना पूरे समाज से, या, यूं कहिये ख़ास तौर से शासक वर्ग से अपील करते हैं। वे सोचते हैं कि भला ऐसा कैसे हो सकता है कि उनकी प्रणाली को एक बार समझ लेने के बाद लोग यह न देखें कि वह समाज की यथासंभव सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था के लिए यथासंभव सर्वश्रेष्ठ योजना है?

इसलिए, तमाम राजनीतिक, और ख़ास तौर से क्रांतिकारी कार्रवाइयों को वे ठुकरा देते हैं। अपने उद्देश्यों को वे शांतिमय तरीक़ों से हासिल करना चाहते हैं, और छोटे-छोटे प्रयोगों के ज़रिये, जिनकी असफलता अवश्यम्भावी है और नमूने के ज़ोर से वे अपने नवीन सामाजिक दिव्य-संदेश के लिए मार्ग प्रशस्त करने की कोशिश करते हैं।

भावी समाज के ये हवाई चित्र, जो ऐसे समय में बनाये जाते हैं जबकि सर्वहारा वर्ग अभी बहुत अविकसित दशा में होता है और उसे स्वयं अपनी स्थिति की एक अत्यंत काल्पनिक धारणा होती है, समाज के आम पुनर्निर्माण की उसकी प्रथम नैसर्गिक आकांक्षाओं के अनुरूप होते हैं।

किन्तु इन समाजवादी और कम्युनिस्ट प्रकाशनों में आलोचना का भी एक तत्त्व रहता है। वे वर्तमान समाज के प्रत्येक सिद्धान्त पर प्रहार करते हैं। इसलिए मज़दूर वर्ग के प्रबोधन के लिए उनके अन्दर अत्यन्त मूल्यवान सामग्री मौजूद रहती है। उनमें भावी समाज के बारे में जो भी अमली तजवीज़ें पेश की गयी हैं—यह कि शहर और देहात का फ़र्क़ मिटा दिया जाये, परिवार की प्रथा का, अलग-अलग व्यक्तियों के निजी फ़ायदे के लिए उद्योग चलाने की पद्धति का तथा मज़दूरी व्यवस्था का अन्त कर दिया

जाये, सामाजिक सामंजस्य की स्थापना की जाये, राज्य की क्रिया का केवल उत्पादन के निरीक्षण में रूपान्तरण किया जाये—ये सब तजवीज़ें उन वर्ग विरोधों की समाप्ति की दिशा में इंगित करती हैं जो उस समय उठने लगे थे और जो इन प्रकाशनों में केवल अपने सबसे प्रारम्भिक, अस्पष्ट और अपरिभाषित रूप में माने गये हैं। इन तजवीज़ों का स्वरूप, इसलिए, विशुद्ध काल्पनिक है।

आलोचनात्मक-कल्पनावादी समाजवाद और कम्युनिज़्म का महत्त्व इतिहास के विकासक्रम के साथ घटता जाता है। आधुनिक वर्ग संघर्ष जैसे-जैसे बढ़ता है और निश्चित आकार ग्रहण करता है, वैसे-वैसे इस संघर्ष से दूर खड़े रहने की बेतुकी स्थिति का, इस संघर्ष का विरोध करने की बेतुकी बातों का सारा व्यावहारिक महत्त्व और सैद्धांतिक औचित्य भी ख़तम होता जाता है। फलतः यद्यपि इन पद्धतियों के संस्थापक बहुत बातों में क्रान्तिकारी थे, तथापि उनके शिष्यों ने सदैव प्रतिक्रियावादी संकीर्ण गुट ही बनाये हैं। सर्वहारा के प्रगतिशील ऐतिहासिक विकास के विपरीत वे अपने गुरुओं के मूल विचारों से चिपके हुए हैं। इसलिए वे हमेशा वर्ग संघर्ष को चेतनाशून्य करने और विरोधी वर्गों में मेल-मिलाप कराने की कोशिश करते हैं। वे अभी भी अपनी काल्पनिक सामाजिक व्यवस्थाओं को प्रयोगात्मक रूप में चरितार्थ करने, इक्के-दुक्के फ़ालांस्तेर खड़े करने, "गृह-उपनिवेश" («*Home-colonies*») स्थापित करने, एक नई "छोटी इकारिया"*—नये येरूशलम का जेबी संस्करण—क़ायम करने के सपने

---

* "फ़ालांस्तेरं"—शार्ल फ़ूरिये की योजना पर आधारित समाजवादी बस्तियां थीं; काबे ने अपने कल्पना-देश को "इकारिया" का नाम दिया था और बाद में अमरीका की अपनी कम्युनिस्ट बस्ती को भी उन्होंने इसी नाम से पुकारा। (१८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

ओवेन अपनी आदर्श कम्युनिस्ट सोसाइटियों को «*Home-colonies*» कहते थे। "फ़ालांस्तेर"—उन सार्वजनिक प्रासादों का नाम था जिनकी योजना फ़ूरिये ने बनायी थी। "इकारिया"—उस कल्पना-देश को कहा जाता था जिसकी कम्युनिस्ट संस्थाओं का चित्र काबे ने अंकित किया था। (१८९० के जर्मन संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

देखते हैं, और इन सभी हवाई क़िलों को अमली शक्ल देने के लिए वे पूंजीपतियों की भावनाओं और उनकी थैलियों का आश्रय लेने को मजबूर होते हैं। धीरे-धीरे ये लोग भी प्रतिक्रियावादी दक़ियानूसी समाजवादियों की जमात में पहुंच जाते हैं, जिनका ऊपर चित्रण किया गया है। अंतर केवल इतना रहता है कि उनकी अपेक्षा इनका पांडित्य ज्यादा व्यवस्थापूर्ण होता है और वे अपने सामाजिक विज्ञान की चमत्कारिक शक्ति में कट्टर और मूढ़ग्राही विश्वास रखते हैं।

इसलिए, मज़दूर वर्ग की हर राजनीतिक कारंवाई का वे प्रचंड विरोध करते हैं। उनके मुताबिक़ ऐसी कारंवाइयां केवल नये दिव्य-संदेश में अंध अविश्वास का ही परिणाम हो सकती हैं।

इंगलैंड में ओवेनपंथी चार्टिस्टों[36] का, और फ़्रांस में फ़ूरियेपंथी सुधारवादियों[37] का विरोध करते हैं।

४

विभिन्न विरोधी पार्टियों के सम्बन्ध में कम्युनिस्टों की स्थिति

दूसरे अध्याय में मज़दूर वर्ग की वर्तमान काल की पार्टियों के साथ, जैसे कि इंगलैंड में चार्टिस्टों के साथ और अमरीका में कृषि सुधारकों के साथ, कम्युनिस्टों का सम्बन्ध स्पष्ट किया जा चुका है।

कम्युनिस्ट मज़दूरों के तात्कालिक लक्ष्यों के लिए लड़ते हैं, उनके सामयिक हितों की रक्षा के लिए प्रयत्न करते हैं; किन्तु वर्तमान के आंदोलन में वे इस आंदोलन के भविष्य का भी प्रतिनिधित्व करते हैं और उसका ध्यान रखते हैं। फ़्रांस में दक़ियानूसी और उग्रवादी पूंजीपतियों के ख़िलाफ़ कम्युनिस्ट समाजवादी-जनवादियों* के साथ एका क़ायम करते हैं;

---

*उस समय इस पार्टी का प्रतिनिधित्व संसद में लेद्रू-रोलें, साहित्य में लूई ब्लां[38] और दैनिक पत्रों में «*La Réforme*» करता था। समाजवादी-जनवाद का नाम, यह नाम देनेवाले इन लोगों के साथ, जनवादी या जनतंत्रवादी पार्टी के उस हिस्से का द्योतक था जो कमोबेश समाजवाद के रंग में रंगा था। (१८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

फ़्रांस में उस समय जो पार्टी अपने को समाजवादी-जनवादी कहती थी उसका प्रतिनिधित्व राजनीतिक जीवन में लेद्रू-रोलें और साहित्य में लूई ब्लां करते थे; इस प्रकार वह आज के जर्मन सामाजिक-जनवाद से बिलकुल ही भिन्न पार्टी थी। (१८९० के जर्मन संस्करण में एंगेल्स का नोट।)

लेकिन ऐसा करते हुए वे महान क्रांति के दिनों से परम्परागत रूप में चली आती हुई लफ़्फ़ाज़ी और भ्रांतियों के प्रति आलोचना का रुख़ अपनाने के अपने अधिकार को सुरक्षित रखते हैं।

स्विट्ज़रलैंड में वे उग्रवादियों का समर्थन करते हैं; लेकिन इस बात को भुलाये बिना कि यह पार्टी परस्पर-विरोधी तत्त्वों के मेल से बनी है: कुछ तो उसमें फ़्रांसीसी क़िस्म के जनवादी समाजवादी हैं और कुछ उग्रवादी पूंजीपति।

पोलैंड में वे उस पार्टी का समर्थन करते हैं जो कृषि क्रांति को राष्ट्रीय आज़ादी की पहली शर्त के रूप में ग्रहण करती है और जिसने १८४६ में क्रैको विद्रोह[39] की आग सुलगायी थी।

जर्मनी में जब-जब वहां का पूंजीपति वर्ग निरंकुश राजतंत्र, सामन्ती भूस्वामियों और निम्न-पूंजीपतियों* के ख़िलाफ़ क्रांतिकारी कार्रवाई करता है, तब वे उसके साथ मिलकर लड़ते हैं।

लेकिन वे मज़दूर वर्ग को सर्वहारा और पूंजीपति वर्ग के शत्रुतापूर्ण विरोध का यथासंभव स्पष्ट से स्पष्ट बोध कराने से, क्षण भर के लिए भी, बाज़ नहीं आते, ताकि जर्मन मज़दूर उन सामाजिक और राजनीतिक अवस्थाओं को, जिन्हें पूंजीपति वर्ग अपने प्रभुत्व के साथ अनिवार्यतः लागू करेगा, फ़ौरन पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध, साधन के रूप में, इस्तेमाल करना शुरू कर सकें, ताकि जर्मनी में प्रतिक्रियावादी वर्गों का तख़्ता उलटने के बाद स्वयं पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ तुरन्त ही लड़ाई की शुरूआत हो जाये।

जर्मनी की ओर कम्युनिस्ट ख़ास तौर से इसलिए ध्यान देते हैं कि वह देश ऐसी पूंजीवादी क्रांति के द्वार पर खड़ा है जो अनिवार्यतः यूरोपीय सभ्यता की अधिक उन्नत अवस्थाओं में, इंगलैंड की सत्रहवीं शताब्दी और फ़्रांस की अठारहवीं शताब्दी के मुक़ाबले, एक अधिक उन्नत सर्वहारा

---

*जर्मन मूल में इसके लिए «Kleinbürgerei» शब्द इस्तेमाल किया गया है। मार्क्स और एंगेल्स शहरी निम्न-पूंजीपतियों के प्रतिक्रियावादी तत्त्वों के लिए इस शब्द का इस्तेमाल करते थे।—सं०

को लेकर होगी; और इसलिये कि जर्मनी की यह पूंजीवादी क्रांति उसके बाद तुरंत ही होनेवाली सर्वहारा क्रान्ति की उपक्रमणिका होगी।

संक्षेप में, कम्युनिस्ट सर्वत्र मौजूदा सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था के ख़िलाफ़ हर क्रान्तिकारी आन्दोलन का समर्थन करते हैं।

इन तमाम आन्दोलनों में वे प्रमुख प्रश्न के रूप में स्वामित्व के प्रश्न को, चाहे उस समय उसका जिस अंश में भी विकास हुआ हो, सर्वोपरि स्थान देते हैं।

अंत में, वे सर्वत्र तमाम देशों की जनवादी पार्टियों के बीच एकता और समझौता कराने की कोशिश करते हैं।

कम्युनिस्ट अपने विचारों और उद्देश्यों को छिपाना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते हैं। वे खुलेआम एलान करते हैं कि उनके लक्ष्य पूरी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को बलपूर्वक उलटने से ही सिद्ध किये जा सकते हैं। कम्युनिस्ट क्रान्ति के भय से शासक वर्ग कांपा करें। सर्वहारा के पास खोने के लिए अपनी बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं है। जीतने के लिए सारी दुनिया है।

दुनिया के मज़दूरो, एक हो!

फ़्रेडरिक एंगेल्स

कम्युनिज़्म के सिद्धांत

कम्युनिज्म के सिद्धान्त[40]

प्रश्न १ : कम्युनिज्म क्या है ?

उत्तर : कम्युनिज्म सर्वहारा की मुक्ति की शर्तों का सिद्धान्त है।

प्रश्न २ : सर्वहारा क्या है ?

उत्तर : सर्वहारा समाज का वह वर्ग है जो अपनी आजीविका के साधन पूर्णतया तथा केवल अपने श्रम की बिक्री से हासिल करता है, किसी पूंजी से हासिल किये गये मुनाफ़े से नहीं; जिसकी भलाई और दुख, जिसकी ज़िन्दगी और मौत, जिसका पूरा अस्तित्व श्रम की मांग पर, इस कारण अच्छे कारोबार के समय तथा बुरे कारोबार के समय की अदला-बदली पर, बेलगाम होड़ से पैदा होनेवाले उतार-चढ़ावों पर निर्भर करते हैं। संक्षेप में, सर्वहारा अथवा सर्वहारा वर्ग, उन्नीसवीं शताब्दी का श्रमजीवी वर्ग है।

प्रश्न ३ : तो क्या, इसका मतलब यह हुआ कि सर्वहारा हमेशा से विद्यमान नहीं रहे हैं ?

उत्तर : हां, नहीं रहे। ग़रीब लोग तथा श्रमजीवी वर्ग हमेशा से रहे हैं तथा श्रमजीवी वर्ग अधिकतर ग़रीब रहे हैं। परन्तु ऐसे ग़रीब, ऐसे मजदूर अर्थात सर्वहारा, जो अभी-अभी चर्चित अवस्थाओं के अन्दर रहे हैं, हमेशा से उसी तरह अस्तित्वमान नहीं रहे हैं जिस तरह होड़ हमेशा से मुक्त तथा बेलगाम नहीं रही है।

प्रश्न ४ : सर्वहारा का जन्म कैसे हुआ ?

उत्तर : सर्वहारा उस औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप पैदा हुआ जो गत शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इंगलैंड में प्रकट हुई थी और जिसकी तब

से संसार के समस्त सभ्य देशों में पुनरावृत्ति होती रही है। भाप-इंजन, बुनाई की विविध मशीनों, यांत्रिक करघों तथा बहुत बड़ी संख्या में अन्य यांत्रिक उपकरणों के आविष्कार ने इस औद्योगिक क्रान्ति को जन्म दिया था। इन मशीनों ने, जो बहुत महंगी थीं और फलस्वरूप जिन्हें केवल बड़े पूंजीपति ही ख़रीद सकते थे, उत्पादन की तब तक विद्यमान पद्धति को बदल दिया तथा तब तक विद्यमान मज़दूरों को बेदख़ल कर दिया क्योंकि मशीनें अपने अपरिष्कृत चरखों तथा हथकरघों से काम करनेवाले मज़दूरों से अधिक सस्ते तथा बेहतर माल उत्पादित कर रही थीं। इस प्रकार इन मशीनों ने उद्योग को पूरी तरह बड़े पूंजीपतियों के हवाले कर दिया तथा मज़दूरों की अत्यल्प सम्पत्ति (औज़ार, हथकरघे आदि) को निकम्मा बना दिया, इससे पूंजीपति शीघ्र हर चीज़ के मालिक बन गये और मज़दूरों के पास कुछ भी नहीं रह गया। इस प्रकार वस्त्र उत्पादन के क्षेत्र में फ़ैक्टरी प्रणाली चालू की गयी।—मशीनों तथा फ़ैक्टरी प्रणाली को उत्प्रेरणा मिलने की ही देर थी कि उसने उद्योग की तमाम अन्य शाखाओं पर, विशेष रूप से कपड़े पर छपाई तथा पुस्तकें मुद्रित करनेवाले व्यवसायों, मिट्टी के बर्तन बनाने के धंधे और लोहे की चीज़ें बनानेवाले उद्योग पर तेज़ी से धावा बोल दिया। श्रम अनेकानेक मज़दूरों के बीच अधिकाधिक बंटता चला गया, इस कारण जो मज़दूर पहले पूरी वस्तु तैयार करता था, वह अब वस्तु का मात्र एक भाग बनाने लगा। इस श्रम विभाजन ने माल को अधिक शीघ्रतापूर्वक और इस कारण अधिक सस्ते दामों पर मुहैया करना सम्भव बना दिया। उसने हर मज़दूर के श्रम को बहुत ही सरल, निरन्तर दुहरायी जानेवाली यंत्रवत् क्रिया की स्थिति में पहुंचा दिया, जिसे मशीन उतनी ही अच्छी तरह ही नहीं, वरन उससे कहीं बेहतर ढंग से कर सकती थी। इस प्रकार उद्योग की ये तमाम शाखाएं बुनाई तथा कताई उद्योगों की ही तरह एक-एक कर भाप, मशीनों तथा फ़ैक्टरी प्रणाली के आधिपत्य के अंतर्गत होती चली गयीं। परन्तु इससे वे सब की सब बड़े पूंजीपतियों के हाथों में पहुंच गयीं, और यहां भी मज़दूर स्वतंत्रता के अन्तिम अंशों से वंचित कर दिये गये। वास्तविक मैनुफ़ेक्चर के साथ-साथ धीरे-धीरे दस्तकारियां भी उसी

तरह अधिकाधिक मात्रा में फ़ैक्टरी प्रणाली के आधिपत्य के अन्तर्गत होती चली गयीं क्योंकि यहां भी बड़े पूंजीपतियों ने बड़े-बड़े वर्कशाप बनाकर, जिनमें बहुत-सारा ख़र्चा बच जाता था तथा मजदूरों के बीच श्रम का सुविधापूर्वक विभाजन किया जा सकता था, छोटे कारीगरों को बाहर धकेल दिया। इस तरह परिणाम यह हुआ है कि तमाम सभ्य देशों में श्रम की लगभग सभी शाखाएं फ़ैक्टरी प्रणाली के अन्तर्गत संचालित होती हैं, और लगभग इन तमाम शाखाओं में से दस्तकारी तथा मैनुफ़ेक्चर को बड़े पैमाने के उद्योग ने बाहर धकेल दिया है।—फलस्वरूप पहले के मध्यम वर्ग, ख़ास तौर पर छोटे दर्जे के कारीगरों को बरबादी की ओर पहुंचा दिया गया है, मजदूरों की पहले की स्थिति बिल्कुल बदल गयी है, तथा दो नये वर्ग, जो धीरे-धीरे तमाम अन्य वर्गों को अपने अन्दर समा रहे हैं, अस्तित्व में आये हैं, अर्थात—

१. बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, जो तमाम सभ्य देशों में अब जीवन-निर्वाह के सारे साधनों तथा कच्चे माल और औज़ारों (मशीनों, फ़ैक्टरियों आदि) का, जिनकी जीवन-निर्वाह के इन साधनों के उत्पादन के लिए ज़रूरत पड़ती है, प्रायः पूर्णतया स्वामी हैं। यह बुर्जुआ वर्ग है, अथवा बुर्जुआ।

२. उन लोगों का वर्ग जिनके पास बिल्कुल कुछ नहीं है, जो इस कारण पूंजीपतियों को अपना श्रम बेंचने के लिए बाध्य होते हैं ताकि बदले में जीवन-निर्वाह के आवश्यक साधन हासिल कर सकें। इस वर्ग को सर्वहारा वर्ग अथवा सर्वहारा के नाम से पुकारा जाता है।

प्रश्न ५: सर्वहाराओं के श्रम की पूंजीपतियों के हाथ बिक्री किन परिस्थितियों में होती है?

उत्तर: श्रम किसी भी दूसरे माल की भांति एक माल है तथा उसका दाम भी अन्य मालों के दाम की ही तरह उन्हीं क़ानूनों से निर्धारित होता है। बड़े पैमाने के उद्योग अथवा मुक्त होड़ के आधिपत्य के अन्तर्गत—जैसा कि हम देखेंगे, यह एक ही चीज़ है—किसी माल का दाम औसतन हमेशा उस माल की उत्पादन लागत के बराबर होता है। इसलिए श्रम का दाम श्रम की उत्पादन लागत के बराबर है। श्रम की उत्पादन

लागत जीवन-निर्वाह के साधनों की ठीक वह राशि है जिसकी ज़रूरत इसलिए पड़ती है कि मज़दूर को काम करने योग्य रखा जा सके और मज़दूर वर्ग को मरने से रोका जा सके। मज़दूर को अपने श्रम के बदले उससे अधिक नहीं मिलेगा जितना उस उद्देश्य के लिए आवश्यक होता है; श्रम का दाम अथवा मज़दूरी न्यूनतम, आजीविका बनाये रखने योग्य न्यूनतम होगा। चूंकि कारोबार की हालत कभी बिगड़ जाती है तथा कभी बेहतर हो जाती है, इसलिए मज़दूर को कभी कम, कभी ज़्यादा मिलता है, ठीक उसी तरह जिस तरह कारख़ानेदार को अपने माल के लिए कभी ज़्यादा और कभी कम मिलता है। परन्तु वक़्त चाहे अच्छा हो या बुरा, कारख़ानेदार को औसतन अपने माल के लिए उसकी उत्पादन लागत से जिस तरह न तो अधिक मिलता है और न कम, उसी तरह मज़दूर को उस न्यूनतम से न तो अधिक मिलेगा और न कम। श्रम की तमाम शाखाओं को बड़े पैमाने का उद्योग ज्यों-ज्यों अधिकाधिक अपने क़ब्ज़े में करता जायेगा, मज़दूरी का यह आर्थिक नियम उतनी ही कड़ाई से लागू होगा।

प्रश्न ६: औद्योगिक क्रान्ति से पहले कौनसे श्रमजीवी वर्ग विद्यमान थे?

उत्तर: सामाजिक विकास की भिन्न-भिन्न मंज़िलों के अनुसार श्रमजीवी वर्ग भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में रहते थे और सम्पत्तिधारी तथा सत्ताधारी वर्गों से उनके सम्बन्ध भिन्न-भिन्न प्रकार के होते थे। प्राचीन काल में मेहनतकश लोग अपने मालिकों के **दास** थे, ठीक उसी तरह जिस तरह वे कई पिछड़े हुए देशों तथा संयुक्त राज्य अमरीका तक के दक्षिणी भाग में आज भी हैं। मध्य युग में वे भूमि के मालिक अभिजात वर्ग के **भू-दास** थे, ठीक उसी तरह जिस तरह वे आज भी हंगरी, पोलैंड तथा रूस में हैं। मध्य युग में तथा औद्योगिक क्रान्ति होने तक शहरों में दस्तकार भी थे जो निम्न-पूंजीवादी उस्तादों की नौकरी करते थे। मैनुफ़ेक्चर के विकास के साथ-साथ धीरे-धीरे मैनुफ़ेक्चर मज़दूरों का उद्भव होने लगा जिन्हें अब कमोबेश बड़े पूंजीपतियों ने काम पर रख लिया था।

प्रश्न ७: सर्वहारा दास से किस माने में भिन्न है?

उत्तर : दास सीधे-सीधे बेच दिया जाता है, सर्वहारा को रोज़-रोज़, घड़ी-घड़ी अपने को बेचना पड़ता है। हर दास के लिए, जो एक ही मालिक की सम्पत्ति होता है, भले ही मालिक के हितार्थ, जीवन-निर्वाह की—वह चाहे कितना ही घटिया क्यों न हो—गारंटी रहती है; हर सर्वहारा के लिए, जो पूरे पंजीपति वर्ग की सम्पत्ति होता है और जिसका श्रम केवल उसी समय ख़रीदा जाता है जब किसी को उसकी आवश्यकता पड़ती है, गारंटीशुदा जीवन-निर्वाह की व्यवस्था नहीं होती। सर्वहारा के लिए जीवन-निर्वाह की केवल समग्र वर्ग के रूप में गारंटी की जाती है। दास होड़ से बाहर रहता है, सर्वहारा उसके अन्दर रहता है और उसके सारे उतार-चढ़ाव को अनुभव करता है। दास को एक वस्तु माना जाता है, नागरिक समाज का सदस्य नहीं। सर्वहारा को व्यक्ति के रूप में, नागरिक समाज के सदस्य के रूप में देखा जाता है। इसलिए दास सर्वहारा से बेहतर जीवन बिता सकता है, परन्तु सर्वहारा समाज के विकास की उच्चतर मंज़िल का मनुष्य होता है और स्वयं दास से उच्चतर मंज़िल में होता है। दास निजी स्वामित्व के तमाम सम्बन्धों में केवल दासत्व का सम्बन्ध भंग कर ही अपने को मुक्त करता है और इस प्रकार स्वयं सर्वहारा बन जाता है; सर्वहारा सामान्य रूप से निजी स्वामित्व को मिटाकर ही अपने को मुक्त कर सकता है।

प्रश्न ८ : सर्वहारा भू-दास से किस माने में भिन्न है?

उत्तर : भू-दास के पास उत्पादन का औज़ार—ज़मीन का एक टुकड़ा—होता है, जिसके बदले वह उपज का एक हिस्सा दे देता है या कुछ काम करता है। सर्वहारा उत्पादन के उन औज़ारों से काम करता है जो दूसरे के होते हैं, वह इस दूसरे के लिए काम करता है जिसके बदले आमदनी का एक हिस्सा पाता है। भू-दास देता है, सर्वहारा को दिया जाता है। भू-दास के लिए जीवन-निर्वाह की गारंटी होती है, सर्वहारा के लिए नहीं। भू-दास होड़ से बाहर होता है, सर्वहारा उसके अन्दर। भू-दास या तो शहर भागकर और वहां दस्तकार बनकर अपने को स्वतंत्र करता है अथवा अपने मालिक को श्रम या उपज देने के बदले धन देकर तथा इस तरह मुक्त पट्टेदार बनकर, अथवा सामन्ती मालिक को भगाकर

तथा स्वयं मालिक बनकर, संक्षेप में, इस या उस तरह सम्पत्तिधारी वर्ग तथा होड़ में शामिल होकर अपने को स्वतंत्र करता है। सर्वहारा होड़, निजी स्वामित्व तथा समस्त वर्ग विभेद मिटाकर अपने को स्वतंत्र करता है।

प्रश्न ९ : सर्वहारा दस्तकार से किस माने में भिन्न है? *

प्रश्न १० : सर्वहारा मैनुफ़ेक्चर मजदूर से किस माने में भिन्न है?

उत्तर : सोलहवीं सदी से लेकर अठारहवीं सदी तक के मैनुफ़ेक्चर मजदूर लगभग सभी जगह उस समय भी उत्पादन के अपने औज़ार – अपने करघों, घरेलू चरखों तथा ज़मीन के उस छोटे टुकड़े का स्वामी हुआ करता था जिस पर वह फ़ुर्सत के वक़्त काश्त किया करता था। सर्वहारा के पास इनमें से कुछ भी नहीं है। मैनुफ़ेक्चर मजदूर प्रायः देहात में अपने भू-स्वामी या अपने मालिक के साथ पितृसत्तात्मक सम्बन्धों के अन्तर्गत रहता है; सर्वहारा अधिकतर बड़े शहरों में बसता है और अपने मालिक के साथ उसका सम्बन्ध विशुद्ध रूप से मुद्रा सम्बन्ध हुआ करता है। मैनुफ़ेक्चर मज़दूर, जिसे बड़े पैमाने का उद्योग पितृसत्तात्मक सम्बन्धों से बाहर ले आता है, वह सम्पत्ति खो बैठता है जिस पर उस समय तक उसका स्वामित्व होता था और इस तरह वह स्वयं सर्वहारा बन जाता है।

प्रश्न ११ : औद्योगिक क्रान्ति के तथा समाज के पूंजीपतियों तथा सर्वहाराओं में बंट जाने के तात्कालिक परिणाम क्या थे?

उत्तर : पहला, मशीनी श्रम के कारण औद्योगिक वस्तुओं की क़ीमतें चूंकि निरन्तर घटती जा रही थीं, शारीरिक श्रम पर आधारित मैनुफ़ेक्चर या उद्योग की पुरानी प्रणाली संसार के तमाम देशों में पूर्णतया नष्ट हो गयी। समस्त अर्द्ध-बर्बर देशों को, जो अभी तक ऐतिहासिक विकास से कमोबेश अलग-थलग थे तथा जिनका उद्योग अभी तक मैनुफ़ेक्चर पर आधारित था, इस प्रकार अपने अलगाव से ज़बर्दस्ती बाहर ले आया गया।

---

*पाण्डुलिपि में एंगेल्स ने उत्तर देने के लिए खाली जगह छोड़ दी है। – सं०

उन्होंने अंग्रेजों का सस्ता माल ख़रीदा तथा अपने मैनुफ़ेक्चर मज़दूरों को नष्ट होने दिया। इससे हुआ यह कि जो देश, उदाहरण के लिए भारत, सहस्राब्दियों तक गतिरोध की स्थिति में रहे, उनका ऊपर से नीचे तक क्रान्तिकरण हो गया, और चीन तक अब क्रान्ति की ओर अग्रसर हो रहा है। इस तरह हुआ यह कि आज इंगलैंड में जिस मशीन का आविष्कार होता है, वह एक साल के अन्दर चीन में लाखों-लाख मज़दूरों की रोज़ी-रोटी छीन लेती है। इस तरह बड़े पैमाने का उद्योग पृथ्वी के तमाम जनगण को एक दूसरे के साथ सम्बन्धों के अन्तर्गत ले आया है, उसने तमाम छोटी स्थानीय मंडियों को बटोरकर एक विश्व मंडी बना डाली है, सभ्यता तथा प्रगति के लिए सर्वत्र पथ प्रशस्त किया है और स्थिति ऐसे विन्दु पर पहुंच गयी है कि सभ्य देशों में होनेवाली हर घटना तमाम अन्य देशों को प्रभावित करती है। इस प्रकार यदि इंगलैंड या फ़्रांस के मज़दूर अब अपने को स्वतंत्र कर दें तो इससे अन्य सभी देशों में क्रान्तियों को प्रेरणा मिलेगी जिनके फलस्वरूप देर-सबेर वहां भी मज़दूरों की मुक्ति हो जायेगी।

दूसरा, बड़े पैमाने के उद्योग ने जहां कहीं मैनुफ़ेक्चर की जगह ली है, वहां औद्योगिक क्रान्ति ने पूंजीपति वर्ग, उसकी दौलत तथा उसकी शक्ति का अधिकतम मात्रा में विकास किया तथा उसे देश में प्रथम वर्ग बना दिया। परिणामस्वरूप जहां कहीं ऐसा हुआ, पूंजीपति वर्ग ने राजनीतिक सत्ता अपने हाथों में ले ली तथा तब तक के सत्ताधारी वर्गों को—अभिजात वर्ग, शिल्प संघ के बर्गरों तथा इन दोनों का प्रतिनिधित्व करनेवाले निरंकुश राजतंत्र को—बाहर खदेड़ दिया। पूंजीपति वर्ग ने भू-सम्पत्ति के उत्तराधिकार या उसकी बिक्री पर पाबन्दी मिटाकर तथा अभिजात वर्ग के विशेषाधिकार मिटाकर अभिजात वर्ग, सामन्त वर्ग की शक्ति को नष्ट कर दिया। पूंजीपति वर्ग ने सारे शिल्प संघों तथा दस्तकारी के विशेषाधिकारों को मिटाकर शिल्प संघीय बर्गरों की ताक़त ख़त्म कर दी। उसने इन दो की जगह मुक्त होड़ को रखा, यानी समाज की एक ऐसी प्रणाली रखी जिसमें हर एक को उद्योग की किसी भी शाखा में संलग्न होने का अधिकार रहता है और जहां आवश्यक पूंजी के अभाव को

छोड़कर और कोई चीज़ उसके लिए बाधक नहीं बन सकती। इसलिए मुक्त होड़ का प्रचलन इस बात की सार्वजनिक घोषणा है कि समाज के सदस्य अब से केवल उसी हद तक असमान हैं जिस हद तक उनकी पूंजी असमान है, कि पूंजी निर्णायक शक्ति है और इस कारण पूंजीपति, बुर्जुआ समाज का प्रथम वर्ग बन गया है। परन्तु मुक्त होड़ बड़े पैमाने के उद्योग के आरम्भिक काल में ही आवश्यक है क्योंकि समाज की केवल यही एकमात्र अवस्था है जिसमें बड़े पैमाने का उद्योग पनप सकता है। पूंजीपति वर्ग इस तरह सामन्तों तथा शिल्प संघीय वर्गरों की सामाजिक शक्ति ज्योंही नष्ट कर डालता है, वह उनकी राजनीतिक शक्ति भी नष्ट कर देता है। समाज में प्रथम वर्ग बनने के बाद पूंजीपति वर्ग ने अपने को राजनीतिक क्षेत्र में भी प्रथम वर्ग घोषित कर दिया। यह काम उसने प्रतिनिधिमूलक प्रणाली स्थापित करके किया जो क़ानून के सामने पूंजीवादी समानता तथा मुक्त होड़ की क़ानूनी मान्यता पर आधारित है और जिसे यूरोपीय देशों में संवैधानिक राजतंत्र के रूप में प्रचलित किया गया था। इन संवैधानिक राजतंत्रों के अन्तर्गत केवल वे लोग ही निर्वाचक होते हैं जिनके पास कुछ मात्रा में पूंजी होती है, अर्थात् जो पूंजीपति होते हैं; ये पूंजीपति निर्वाचक प्रतिनिधि चुनते हैं और ये पूंजीवादी प्रतिनिधि आपूर्ति से इनकार करने के अधिकार के बल पर पूंजीवादी सरकार चुना करते हैं।

तीसरा, औद्योगिक क्रान्ति ने सर्वहारा वर्ग का उसी हद तक निर्माण किया जिस हद तक उसने पूंजीपति वर्ग का निर्माण किया। पूंजीपति वर्ग जिस हिसाब से दौलत हासिल करता गया, सर्वहाराओं की तादाद भी उसी हिसाब से बढ़ती गयी। चूंकि सर्वहाराओं को केवल पूंजी ही काम पर लगा सकती है और चूंकि पूंजी तभी बढ़ सकती है जब वह मज़दूरों को रोज़गार पर रखे, सर्वहारा वर्ग की वृद्धि पूंजी की वृद्धि के साथ बिल्कुल क़दम से क़दम मिलाती है। साथ ही वह बड़े शहरों में, जहां उद्योग को सबसे अधिक लाभप्रद ढंग से चलाया जा सकता है, पूंजीपतियों तथा सर्वहाराओं को जमा कर देती है, और एक ही जगह पर लोगों के बहुत बड़े समूह के इस जमाव से सर्वहारा अपनी शक्ति से अवगत हो जाते

हैं। इसके अलावा इसका जितना अधिक विकास होता है, जितनी ज़्यादा मशीनों का, जो शारीरिक श्रम का ख़ात्मा करती हैं, आविष्कार होता है, बड़े पैमाने का उद्योग, जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं, मज़दूरी को उतना ही ज़्यादा संकुचित कर न्यूनतम विन्दु पर ले आता है तथा इस प्रकार सर्वहारा की परिस्थितियों को असहनीय वना देता है। इस प्रकार एक ओर सर्वहारा के वढ़ते हुए असन्तोष तथा दूसरी ओर उसकी वढ़ती हुई शक्ति के ज़रिये औद्योगिक क्रान्ति सर्वहारा द्वारा सामाजिक क्रान्ति किये जाने का पथ प्रशस्त करती है।

प्रश्न १२ : औद्योगिक क्रान्ति के और क्या परिणाम निकले?

उत्तर : भाप इंजन तथा अन्य मशीनों के रूप में बड़े पैमाने के उद्योग ने ऐसे साधनों का निर्माण किया जिनसे अत्यल्प समय में और मामूली ख़र्चे पर औद्योगिक उत्पादन को असीमित रूप से वढ़ाना सम्भव हुआ। मुक्त होड़ ने, जो बड़े पैमाने के उद्योग का अपरिहार्य फल है, उत्पादन की अनुकूल स्थितियों की वदौलत शीघ्र अतीव गहन स्वरूप ग्रहण कर डाला ; पूंजीपति वहुत वड़ी तादाद में उद्योग में घुसे। और उससे वहुत अधिक पैदा होने लगा जितना इस्तेमाल हो सकता था। फल यह हुआ कि तैयार माल वेचा नहीं जा सका और तथाकथित व्यापार संकट शुरू हुआ। कारख़ाने ठप्प हो गये, उनके मालिक दिवालिया हो गये तथा मज़दूरों को रोज़ी-रोटी से हाथ धोना पड़ा। भारी तंगहाली शुरू हुई। कुछ समय वाद अतिरिक्त माल विक गया, कारख़ाने फिर चालू हो गये, मज़दूरी फिर बढ़ गयी, और धीरे-धीरे कारोवार वढ़ते हुए पहले से कहीं तेज़ हो गया। लेकिन वहुत अधिक समय नहीं गुज़रा था कि वहुत ही अधिक परिमाण में माल उत्पादित होने लगा, एक और संकट शुरू हुआ और उसने भी पूर्ववर्ती संकट का रास्ता पकड़ा। इस प्रकार इस शताब्दी के आरम्भ से उद्योग की हालत बरावर समृद्धि के दौरों तथा संकट के दौरों के बीच झूलती रही ; और इस तरह का संकट पांच-सात साल तक के प्रायः नियमित अन्तरालों में पैदा होता रहा, वह अपने साथ मज़दूरों के लिए असहनीय दुर्दशा और क्रान्तिकारी उफान, तथा पूरी मौजूदा व्यवस्था के लिए सबसे बड़ा संकट लाता गया।

प्रश्न १३: नियमित रूप से सामने आनेवाले इन संकटों से क्या निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं?

उत्तर: पहला, अपने विकास की आरम्भिक मंज़िलों में बड़े पैमाने के उद्योग ने यद्यपि स्वयं मुक्त होड़ को जन्म दिया, पर अब मुक्त होड़ की परिधि उसके लिए छोटी पड़ गयी है; होड़ तथा सामान्यतया अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा किया जानेवाला औद्योगिक उत्पादन का काम बड़े पैमाने के उद्योग के पांवों के लिए बेड़ियां बन गये हैं, जिन्हें उसे तोड़ना है तथा जिन्हें वह तोड़ेगा; बड़े पैमाने का उद्योग जब तक वर्तमान आधार पर संचालित होता रहेगा, वह हर सात साल बाद अपने को दुहराने-वाली आम अव्यवस्था के ज़रिये ही ज़िंदा रह सकता है, जो हर बार सर्वहाराओं को कष्टों के कुंड में झोंककर ही नहीं, वरन बहुत बड़ी तादाद में पूंजीपतियों को भी बरबाद कर पूरी सभ्यता को खटाई में डालता है; इसलिए या तो बड़े पैमाने के उद्योग का परित्याग करना होगा जो सर्वथा असम्भव है, अथवा वह समाज का एक बिल्कुल नया संगठन सर्वथा आवश्यक बनाता है जिसमें एक दूसरे से होड़ करनेवाले पृथक्-पृथक् कारख़ानेदार नहीं, वरन पूरा समाज एक निश्चित योजना के अनुसार तथा सब की आवश्यकताओं के अनुसार औद्योगिक उत्पादन का संचालन करे।

दूसरा, बड़े पैमाने का उद्योग तथा उस द्वारा सम्भव बनाया जानेवाला उत्पादन का असीम विकास ऐसी सामाजिक व्यवस्था को जन्म दे सकते हैं जिसमें जीवन की सभी आवश्यक वस्तुओं का इतना बड़ा उत्पादन होगा कि समाज का हर सदस्य अपनी सारी शक्तियों तथा योग्यताओं का पूर्णतम स्वतंत्रता के साथ विकास तथा उपयोग करने में समर्थ होगा। इस तरह बड़े पैमाने के उद्योग का ठीक वह गुण, जो आज के समाज में सारी ग़रीबी तथा सारे व्यापार संकटों को जन्म देता है, ठीक वह गुण है जो भिन्न सामाजिक संगठन में उस दरिद्रता को तथा इन विनाशकारी उतार-चढ़ावों को नष्ट कर देगा।

अतः यह स्पष्टतया सिद्ध हो जाता है:

१. अब से इन सारी बुराइयों के लिए उस सामाजिक व्यवस्था को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है जो विद्यमान परिस्थितियों से मेल नहीं खाती;

२. इन बुराइयों को एक नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के माध्यम से पूरी तरह मिटाने के साधन उपलब्ध हैं।

प्रश्न १४: यह नयी सामाजिक व्यवस्था किस तरह की होनी चाहिए?

उत्तर: सबसे पहले नयी सामाजिक व्यवस्था ग्राम तौर पर उद्योग तथा उत्पादन की तमाम शाखाओं को चलाने का काम अपने बीच होड़ करनेवाले अलग-अलग व्यक्तियों के हाथों से छीनकर अपने पास ले लेगी और फिर समूचे रूप से समाज की ओर से, अर्थात् एक सामाजिक योजना के अनुसार तथा समाज के तमाम सदस्यों की शिरकत के साथ उत्पादन की इन शाखाओं का संचालन करेगी। इस तरह वह होड़ का अन्त कर देगी तथा उसके स्थान पर साहचर्य की प्रतिष्ठापना करेगी। चूंकि अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा उद्योग का संचालन अवश्यम्भावी रूप से निजी स्वामित्व की ओर ले जाता है और चूंकि होड़ उस तौर-तरीक़े के अलावा और कुछ नहीं है जिससे उद्योग अलग-अलग निजी सम्पत्तिधारियों द्वारा संचालित किया जाता है, इसीलिए निजी स्वामित्व को उद्योग के वयक्तिक संचालन तथा होड़ से पृथक् नहीं किया जा सकता। इस कारण निजी स्वामित्व को भी मिटाना होगा तथा उसके स्थान पर उत्पादन के औज़ारों का समान उपयोग होगा तथा तमाम वस्तुओं का वितरण समान सहमति से होगा, अथवा तथाकथित वस्तुओं की साझेदारी होगी। निजी स्वामित्व का उन्मूलन समूची सामाजिक व्यवस्था के रूपान्तरण की, जो उद्योग के विकास से अनिवार्यतः जन्म लेता है, सबसे अधिक संक्षिप्त तथा सबसे अधिक सामान्यीकृत अभिव्यक्ति है, इसलिए यह उचित ही है कि यह कम्युनिस्टों द्वारा पेश की गयी मुख्य मांग है।

प्रश्न १५: तो क्या इसका अर्थ यह हुआ कि निजी स्वामित्व का पहले उन्मूलन असम्भव था?

उत्तर: बिल्कुल ठीक। सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक परिवर्तन, स्वामित्व सम्बन्धों में प्रत्येक क्रान्ति नयी उत्पादक शक्तियों के, जो पुराने स्वामित्व सम्बन्धों से मेल नहीं खातीं, सृजन का अवश्यम्भावी परिणाम है। स्वयं निजी स्वामित्व का इसी प्रकार उद्भव हुआ। बात यह है कि निजी स्वामित्व हमेशा से तो विद्यमान नहीं है; मध्य युग के अन्त के समय,

जब मैनुफ़ेक्चर के रूप में उत्पादन की नई प्रणाली चालू हुई, जिसका उस समय मौजूद सामन्ती तथा शिल्प संघीय स्वामित्व से मेल नहीं था, मैनुफ़ेक्चर ने, जो पुराने स्वामित्व सम्बन्धों से बाहर फैल गया था, स्वामित्व के एक नये रूप का—निजी स्वामित्व का—सृजन किया। मैनुफ़ेक्चर और बड़े पैमाने के उद्योग की पहली मंज़िल के दौरान निजी स्वामित्व के अलावा स्वामित्व का और कोई रूप सम्भव ही नहीं था, निजी स्वामित्व की नींव पर आधारित व्यवस्था के अलावा समाज की और कोई व्यवस्था नहीं हो सकती थी। जब तक उत्पादन इतने पर्याप्त रूप में नहीं होता कि सब के लिए केवल आपूर्ति ही नहीं, बल्कि सामाजिक पूंजी की वृद्धि के लिए तथा उत्पादक शक्तियों के और आगे विकास के लिए भी वस्तुएं बेशी मात्रा में मुहैया की जा सकें, तब तक समाज की उत्पादक शक्तियों पर शासन करनेवाला एक प्रभुताशाली वर्ग तथा एक ग़रीब, उत्पीड़ित वर्ग हमेशा बने रहेंगे। ये वर्ग किस तरह बनते हैं, यह उत्पादन के विकास की मंज़िल पर निर्भर करेगा। मध्य युग में, जो कृषि पर आश्रित था, हमें भूस्वामी तथा भू-दास मिलते हैं; उत्तर मध्य युग के शहर हमारे सामने शिल्प संघ के उस्ताद-कारीगर, उसके शागिर्द तथा दिहाड़ी पर काम करनेवाले मज़दूर प्रस्तुत करते हैं; सत्रहवीं शताब्दी में मैनुफ़ेक्चरर तथा मैनुफ़ेक्चर मज़दूर; उन्नीसवीं शताब्दी में बड़े कारख़ानेदार तथा सर्वहारा सामने आते हैं। यह स्पष्ट है कि उत्पादक शक्तियां अभी तक इतनी व्यापक रूप से विकसित नहीं हो पायी थीं कि वे सब के लिए काफ़ी पैदा कर पातीं और निजी स्वामित्व को इन उत्पादक शक्तियों के लिए बेड़ियां, अवरोध बना सकतीं। परन्तु अब, जबकि बड़े पैमाने के उद्योग के विकास ने पहले, पूंजी तथा उत्पादक शक्तियों का अभूतपूर्व पैमाने पर सृजन कर दिया है तथा इन उत्पादक शक्तियों को अत्यल्प समय में अनवरत रूप से बढ़ानेवाले साधन विद्यमान हैं; जबकि दूसरे, ये उत्पादक शक्तियां चन्द पूंजीपतियों के हाथों में संकेन्द्रित हैं और उधर बहुत बड़ा जन-समुदाय अधिकाधिक संख्या में सर्वहारा की क़तारों में पहुंचता जा रहा है और उसकी हालत उसी मात्रा में अधिकाधिक दयनीय तथा असह्य बनती जा रही है जिस मात्रा में पूंजीपति वर्ग की दौलत बढ़ती जाती है; जबकि तीसरे,

ये शक्तिशाली तथा सुगमतया बढ़नेवाली उत्पादक शक्तियां निजी स्वामित्व तथा पूंजीपति वर्ग से इतनी अधिक बढ़ चुकी हैं कि वे सामाजिक व्यवस्था के अन्दर प्रचण्ड उथल-पुथल पैदा कर रही हैं, — निजी स्वामित्व को मिटाना सम्भव ही नहीं, बल्कि नितान्त अनिवार्य भी हो गया है।

प्रश्न १६: क्या निजी स्वामित्व को शान्तिपूर्ण उपायों से मिटाना सम्भव होगा?

उत्तर: वांछनीय तो यही है और कम्युनिस्ट आख़िरी लोग होंगे जो इसका विरोध करेंगे। कम्युनिस्ट बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि सार षड्यंत्र निरर्थक ही नहीं, हानिप्रद तक होते हैं। वे बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि क्रांतियां जानबूझकर और मनमाने ढंग से नहीं रची जातीं, वे तो सर्वत्र तथा हमेशा उन परिस्थितियों का अवश्यम्भावी परिणाम थीं जो अलग-अलग पार्टियों तथा पूरे वर्गों की इच्छा तथा नेतृत्व से बाहर थीं। परन्तु वे यह भी अनुभव करते हैं कि लगभग हर सभ्य देश में सर्वहारा वर्ग का विकास बलपूर्वक कुचल दिया जाता है तथा कम्युनिस्टों के विरोधी इस तरह क्रान्ति को बढ़ावा देने का हर तरह काम करते हैं। यदि उत्पीड़ित सर्वहारा वर्ग अन्ततः क्रान्ति के लिए उत्प्रेरित है तो हम कम्युनिस्ट तब सर्वहाराओं के ध्येय की रक्षा उसी तरह करनी से करेंगे जिस तरह इस समय कथनी से करते हैं।

प्रश्न १७: क्या निजी स्वामित्व को एक ही झटके में मिटाना सम्भव है?

उत्तर: नहीं, यह उसी तरह असम्भव है जिस तरह एक ही झटके में मौजूदा उत्पादक शक्तियों को उतनी मात्रा में नहीं बढ़ाया जा सकता जो समुदाय का निर्माण करने के लिए आवश्यक होती है। इसलिए सर्वहारा क्रान्ति, जो सारी सम्भावनाओं को देखते हुए समीप आती जा रही है, मौजूदा समाज को धीरे-धीरे ही रूपान्तरित कर सकेगी और वह निजी स्वामित्व को तभी मिटा सकेगी जब उत्पादन के साधनों का आवश्यक परिमाण में निर्माण हो जायेगा।

प्रश्न १८: इस क्रान्ति का विकास मार्ग कैसा होगा?

उत्तर: पहले तो वह एक जनवादी व्यवस्था को और इस प्रकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सर्वहारा के राजनीतिक शासन को प्रतिष्ठापित

करेगी। प्रत्यक्ष रूप से इंगलैंड में, जहां सर्वहारा इस समय भी ग्रावादी की बहुसंख्या है। परोक्ष रूप से फ़्रांस तथा जर्मनी में, जहां ग्रधिकांश लोग सर्वहाराग्रों के ग्रतिरिक्त ऐसे छोटे किसान तथा पूंजीपति हैं जिनका इस समय सर्वहाराकरण हो रहा है, ग्रौर जो ग्रपने हितार्थ सर्वहारा पर ग्रधिकाधिक ग्राश्रित होते जा रहे हैं ग्रौर इसलिए जिन्हें शीघ्र सर्वहारा की मांगों के ग्रागे झुकना होगा। शायद इसके लिए दूसरा संघर्ष करना पड़ेगा जिसका समापन सर्वहारा वर्ग की विजय के रूप में ही होगा।

यदि जनवाद को सीधे निजी स्वामित्व पर प्रहार करने तथा सर्वहारा का ग्रस्तित्व सुनिश्चित करने के लिए कार्रवाइयां सम्पन्न करने के साधन के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जाता तो वह सर्वहारा के लिए बिल्कुल बेकार होगा। इन कार्रवाइयों में, जो इस समय भी विद्यमान सम्बन्धों के परिणाम हैं, मुख्य निम्नलिखित हैं–

१. वर्द्धमान ग्रायकरों, ऊंचे उत्तराधिकार करों, सगोत्रीय वंशानुक्रम (भाई, भतीजे ग्रादि) के उत्तराधिकार के उन्मूलन, ग्रनिवार्य ऋण ग्रादि साधनों से निजी स्वामित्व को सीमित करना।

२. ग्रंशतः राजकीय उद्योग की ग्रोर से होड़ के ज़रिये तथा ग्रंशतः करेंसी नोटों में मुग्रावज़े की ग्रदायगी के ज़रिये भू-स्वामियों, कारख़ानेदारों, रेलों ग्रौर जहाज़ों के स्वामियों की सम्पत्ति को धीरे-धीरे छीन लेना।

३. बहुसंख्यक जनता के ख़िलाफ़ विद्रोह करनेवालों तथा उत्प्रवासियों की सम्पत्ति छीन लेना।

४. राष्ट्रीय जागीरों में, राष्ट्रीय कारख़ानों तथा वर्कशापों में सर्वहाराग्रों के श्रम या व्यवसाय का संगठन करना तथा इस प्रकार स्वयं मज़दूरों के बीच होनेवाली होड़ का ग्रन्त कर देना तथा जब तक कारख़ानेदार मौजूद रहते हैं, तब तक उन्हें उतनी ही ऊंची मज़दूरी देने के लिए बाध्य करना जितनी राज्य देता है।

५. निजी स्वामित्व का पूर्ण उन्मूलन होने तक समाज के तमाम सदस्यों के लिए काम करने की समान ग्रनिवार्यता। ग्रौद्योगिक सेनाग्रों का गठन, विशेष रूप से कृषि के लिए।

६. राजकीय पूंजी वाले राष्ट्रीय बैंक के माध्यम से तथा समस्त निजी

बैंकों को वन्द कर तथा बैंकपतियों को कुचलकर ऋण तथा बैंक कार्यप्रणाली का राज्य के हाथों में केन्द्रीकरण।

७. जिस अनुपात से राष्ट्र के पास मौजूद पूंजी की मात्रा तथा श्रमिकों की संख्या वढ़ती है, उसी अनुपात से राष्ट्रीय कल-कारख़ानों, वर्कशापों, रेलों और जलपोतों की संख्या में वृद्धि, सारी विना जोती ज़मीन की काश्त तथा पहले से जोती ज़मीन का सुधार।

८. तमाम वच्चों को, ज्योंही वे इतने वड़े हो जायें कि मां के लिए उनकी देखभाल करने की ज़रूरत न रहे, राष्ट्रीय संस्थानों में तथा राष्ट्रीय ख़र्च पर शिक्षा। शिक्षा उत्पादन से जुड़ी हो।

९. उद्योग और साथ ही कृषि में काम करनेवाले नागरिकों के समुदायों के लिए राष्ट्रीय जागीरों पर समान आवासगृहों के रूप में वड़े-वड़े प्रासादों का निर्माण तथा शहरी और देहाती जीवन के लाभों को इस तरह मिलाना कि नागरिकों को उनमें से किसी एक का इकतरफ़ापन तथा असुविधाएं न झेलनी पड़ें।

१०. तमाम स्वच्छताहीन तथा ख़राव ढंग से वने मकानों तथा मुहल्लों को गिरा देना।

११. नाजायज़ तथा जायज़ वच्चों द्वारा उत्तराधिकार का समान रूप से उपभोग।

१२. परिवहन के तमाम साधनों का राष्ट्र के हाथों में संकेन्द्रण।

निस्सन्देह ये सारी कार्रवाइयां फ़ौरन लागू नहीं की जा सकतीं। परन्तु एक हमेशा दूसरे को जन्म देगी। निजी स्वामित्व पर एक वार पहला मूलगामी आघात हो जाये, सर्वहारा और आगे वढ़ने तथा राज्य के हाथों में सारी पूंजी, सारी कृषि, सारे उद्योग, सारे परिवहन, विनिमय के सारे साधनों को संकेन्द्रित करने की ओर अग्रसर होने के लिए विवश होगा। ये सब कार्रवाइयां ऐसे परिणाम दिलाने का काम करती हैं; और जिस अनुपात से देश की उत्पादक शक्तियां सर्वहारा के श्रम से कई गुनी वढ़ती जायेंगी, उसी अनुपात से ये कार्रवाइयां पूर्तियोग्य वनेंगी तथा उनके केन्द्रीकरणकारी फलों का विकास होगा। अन्ततः जब सारी पूंजी, सारा उत्पादन और सारा विनिमय राष्ट्र के हाथों में जमा हो जायेगा, निजी

7—2353

स्वामित्व का अस्तित्व अपने-आप मिट जायेगा, धन अनावश्यक हो जायेगा तथा उत्पादन इतना बढ़ जायेगा और लोग इतने बदल जायेंगे कि पुराने सामाजिक सम्बन्धों के अन्तिम रूप धराशायी हो सकेंगे।

प्रश्न १९: क्या यह सम्भव है कि यह क्रान्ति अकेले एक ही देश में सम्पन्न हो?

उत्तर: नहीं। बड़े पैमाने के उद्योग ने विश्व मंडी का पहले ही निर्माण कर पृथ्वी के समस्त जनगण तथा विशेष रूप से सभ्य जनगण को इस तरह सूत्रबद्ध कर दिया है कि हर जनता उस चीज़ पर आश्रित होती है जो दूसरे के साथ घटित होती है। इसके अलावा बड़े पैमाने के उद्योग ने तमाम सभ्य देशों का सामाजिक विकास इतना समतल बना दिया है कि इन तमाम देशों में पूंजीपति तथा सर्वहारा समाज के दो निर्णायक वर्ग बन गये हैं, तथा उनके बीच संघर्ष आज का मुख्य संघर्ष बन चुका है। अतएव कम्युनिस्ट क्रान्ति राष्ट्रीय क्रांति ही नहीं, वह तमाम सभ्य देशों में, कम से कम इंगलैंड, अमरीका, फ्रांस तथा जर्मनी में एकसाथ होगी। इनमें से हर देश में उसे विकसित होने में अधिक या कम समय लगेगा, जो इस बात पर निर्भर करेगा कि किस के पास अधिक विकसित उद्योग, अधिक दौलत तथा उत्पादक शक्तियों की अधिक मात्रा है। इसलिए जर्मनी में उसकी सबसे धीमी तथा कठिनाईपूर्ण गति होगी; इंगलैंड में वह सबसे शीघ्र तथा सुगमतापूर्वक सम्पन्न होगी। वह संसार के अन्य देशों के विकास की अब तक विद्यमान विधि को पूरी तरह बदलते हुए तथा उसकी रफ़्तार बहुत तेज़ करते हुए उन पर बहुत प्रभाव डालेगी। यह विश्व क्रान्ति है और इसलिए पूरा संसार उसका रंगमंच बनेगा।

प्रश्न २०: निजी स्वामित्व के अन्तिम उन्मूलन के क्या परिणाम होंगे?

उत्तर: निजी पूंजीपति तमाम उत्पादक शक्तियों, संचार के साधनों, साथ ही उत्पादित वस्तुओं के विनिमय तथा वितरण का जो उपयोग करते हैं, उसका समाज द्वारा हस्तगतकरण तथा उपलब्ध साधनों और समग्र रूप में समाज की आवश्यकताओं पर आधारित एक योजना के अनुसार समाज द्वारा उनका प्रबन्ध सबसे पहले उन कुपरिणामों का उन्मूलन कर देंगे जो बड़े पैमाने के उद्योग के साथ इस समय संलग्न हैं। संकट ख़त्म हो जायेंगे;

विस्तारित उत्पादन, जिसके परिणामस्वरूप समाज की वर्तमान व्यवस्था में अति उत्पादन होता है तथा जो दरिद्रता का इतना सशक्त कारण है, तब पर्याप्त नहीं रह जायेगा और उसे आगे विस्तारित करना पड़ेगा। समाज की तात्कालिक आवश्यकताओं से अधिक अतिरिक्त उत्पादन अपने साथ दरिद्रता लाने के बजाय सब की जरूरतें पूरी करेगा, नयी ज़रूरतें और उसके साथ ही उनकी पूर्ति के नये साधन पैदा करेगा। वह और अधिक प्रगति की शर्त तथा प्रेरक शक्ति बन जायेगा, प्रगति करते समय वह पूरी सामाजिक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त नहीं करेगा जैसा कि अब तक हमेशा होता आया है। निजी स्वामित्व के जूए से एक बार मुक्त हो चुकने के बाद बड़े पैमाने का उद्योग इतने बड़े पैमाने पर विकसित होगा कि उसके सामने उसके विकास का वर्तमान स्तर उसी तरह तुच्छ लगने लगेगा जिस तरह हमारे ज़माने में बड़े उद्योग की तुलना में मैनुफ़ेक्चर प्रणाली तुच्छ लगती है। उद्योग का यह विकास समाज को वस्तुएं इतनी मात्रा में मुहैया करेगा कि वे सब की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए पर्याप्त होंगी। कृषि भी, जिसे निजी स्वामित्व का दबाव तथा ज़मीन का विखण्डन उपलब्ध सुधारों तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों का उपयोग करने से रोके हुए थे नयी उन्नति करेगी और समाज के सामने वस्तुओं को पर्याप्त मात्रा में पेश कर देगी। इस तरह समाज इस प्रकार के वितरण के लिए पर्याप्त वस्तुएं पैदा करेगा जो उसके सारे सदस्यों की आवश्यकता की पूर्ति करेगा। विभिन्न शत्रुतापूर्ण वर्गों में समाज का विभाजन अनावश्यक हो जायेगा। वह अनावश्यक ही नहीं, अपितु वह नयी सामाजिक व्यवस्था के प्रतिकूल होगा। वर्ग श्रम विभाजन से अस्तित्व में आये थे और श्रम विभाजन अपने विद्यमान रूप में पूरी तरह लुप्त हो जायेगा। औद्योगिक तथा कृषि उत्पादन को वर्णित ऊंचाइयों तक विकसित करने के लिए यांत्रिक तथा रासायनिक साधन ही काफ़ी नहीं होंगे, इन साधनों का उपयोग करनेवाले लोगों की योग्यता भी उतनी ही विकसित होनी चाहिए। जिस तरह पिछली शताब्दी में बड़े पैमाने के उद्योग के अन्तर्गत लाये गये किसानों तथा मैनुफ़ेक्चर मज़दूरों को अपने जीवन का पूरा रंग-ढंग बदलना पड़ा था, और वे स्वयं बिलकुल भिन्न प्रकार के लोग बन गये थे, ठीक उसी तरह समग्र रूप से

समाज द्वारा उत्पादन का संयुक्त संचालन तथा फलस्वरूप उत्पादन का नया विकास बिलकुल भिन्न लोगों की अपेक्षा करते हैं तथा उनका सृजन भी करेंगे। उत्पादन का संयुक्त संचालन ऐसे लोगों द्वारा जिस रूप में वे आज हैं—नहीं किया जा सकता जबकि हर व्यक्ति उत्पादन की किसी एक शाखा से सम्बन्धित है, उससे बंधा हुआ है, उस द्वारा शोषित किया जाता है, जबकि इनमें से हर एक अपनी अन्य सभी योग्यताओं को कुचलकर अपनी केवल एक ही योग्यता का विकास करता है, जो पूरे उत्पादन की केवल एक ही शाखा अथवा एक शाखा के एक भाग को जानता है। समकालीन उद्योग तक के लिए ऐसे लोगों की आवश्यकता कम होती जाती है। जो उद्योग पूरे समाज द्वारा संयुक्त रूप से तथा एक योजना के अनुसार संचालित होता हो, उसके लिए ऐसे लोगों की दरकार है जिनकी योग्यताओं का सर्वतोमुखी विकास हो, जो उत्पादन की समूची प्रणाली का सर्वेक्षण करने की क्षमता रखते हों। फलस्वरूप श्रम विभाजन, जिसकी जड़ें मशीनी व्यवस्था पहले ही खोद चुकी हैं, जो एक व्यक्ति को किसान, दूसरे को मोची, तीसरे को मज़दूर, चौथे को शेयर मार्केट का सट्टेबाज़ बनाती है, इस प्रकार पूर्णतया लुप्त हो जायेगा। शिक्षा नौजवानों को इस योग्य बनायेगी कि वे उत्पादन की पूरी प्रणाली से शीघ्रतापूर्वक परिचित हो सकेंगे, वह उन्हें सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार अथवा अपनी प्रवृत्तियों की प्रेरणा पर बारी-बारी से उद्योग की एक शाखा से दूसरी शाखा में प्रवेश करने में समर्थ बनायेगी। अतः वह विकास के उस इकतरफ़ापन को ख़त्म कर देगी जिसे वर्तमान श्रम विभाजन सब पर थोपे हुए है। इस प्रकार कम्युनिस्ट ढंग से संगठित समाज अपने सदस्यों को व्यापक रूप से विकसित अपनी योग्यताओं को व्यापक ढंग से उपयोग में लाने का सुअवसर देगा। इसके साथ-साथ विविध वर्गों की आवश्यकता लुप्त हो जायेगी। इस प्रकार कम्युनिस्ट ढंग से संगठित समाज एक ओर वर्गों के अस्तित्व से मेल नहीं खाता तथा दूसरी ओर इस समाज का निर्माण ही इन वर्ग विभेदों को मिटाने के साधन मुहैया करता है।

इससे यह अर्थ निकलता है कि शहर तथा देहात के बीच अन्तर भी लुप्त हो जायेगा। दो भिन्न वर्गों के बजाय एक ही तरह के लोगों द्वारा

कृषि तथा औद्योगिक उत्पादन का कार्य किया जाना कम्युनिस्ट साहचर्य के लिए—भले ही विशुद्ध भौतिक कारणों से ही—एक अनिवार्य शर्त है। बड़े शहरों में औद्योगिक आबादी के जमाव के साथ-साथ कृषक आबादी का देश भर में बिखराव कृषि तथा उद्योग की अविकसित मंज़िल के लिए ही अनुकूल है, वह आगे के विकास की, जो इस समय भी अपने को अत्यधिक प्रत्यक्ष करता जा रहा है, राह में एक बाधा है।

उत्पादक शक्तियों के समान तथा नियोजित उपयोग के लिए समाज के तमाम सदस्यों का आम साहचर्य; इतनी मात्रा में उत्पादन का विकास कि वह सब की आवश्यकताएं पूरी कर सके; ऐसी अवस्था की समाप्ति, जिसमें कुछ लोगों की आवश्यकताओं की दूसरों की क़ीमत पर पूर्ति होती हो; वर्गों तथा उनके विरोधों का पूर्ण उन्मूलन; श्रम के अब तक प्रचलित विभाजन के उन्मूलन के माध्यम से, औद्योगिक प्रशिक्षण के माध्यम से, गतिविधियों के परिवर्तन के माध्यम से, सब द्वारा रचित वरदानों में सब की शिरकत के माध्यम से, शहर तथा देहात के परस्पर विलय के माध्यम से समाज के तमाम सदस्यों की योग्यताओं का सर्वतोमुखी विकास,—ऐसे हैं निजी स्वामित्व के उन्मूलन के मुख्य फल।

प्रश्न २१: समाज की कम्युनिस्ट ढंग की व्यवस्था का परिवार पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

उत्तर: वह पुरुषों तथा नारियों के बीच सम्बन्धों को विशुद्ध रूप से निजी मामला बना देगी जिसका केवल सम्बन्धित व्यक्तियों से सरोकार होगा तथा जो समाज से किसी भी तरह के हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं करेगा। यह निजी स्वामित्व के उन्मूलन तथा बच्चों के सार्वजनिक प्रशिक्षण की बदौलत सम्भव होगा। इस तरह प्रचलित विवाह प्रणाली की दोनों आधार-शिलाएं नष्ट की जाती हैं—पत्नी का अपने पति पर तथा बच्चों का अपने मां-बाप पर आश्रितता जो निजी स्वामित्व से प्रभावित होती है। पत्नियों की सर्वोपभोग्यता के विरुद्ध नैतिकता का उपदेश झाड़नेवाले कूपमण्डूकों की चिल्ल-पों का यह उत्तर है। पत्नियों की सर्वोपभोग्यता ऐसा व्यापार है जो पूरी तरह पूंजीवादी समाज का चारित्रिक गुण है और आज वेश्यावृत्ति के रूप में विशुद्ध रूप से विद्यमान है। परन्तु वेश्यावृत्ति की जड़ें तो निजी

स्वामित्व के अन्दर ह और वह उसके साथ ही ढह जायेगी। इस कारण पत्नियों की सर्वोपभोग्यता की स्थापना के वजाय कम्युनिस्ट ढंग का संगठन इसका अन्त कर देगा।

प्रश्न २२: विद्यमान जातियों के प्रति कम्युनिस्ट ढंग के संगठन का क्या रुख़ होगा?

—वही।[41]

प्रश्न २३: विद्यमान धर्मों के प्रति उसका क्या रुख़ होगा?

—वही।

प्रश्न २४: कम्युनिस्ट समाजवादियों से किस माने में भिन्न हैं?

उत्तर: तथाकथित समाजवादियों को तीन समूहों में बांटा जा सकता है।

पहले समूह में उस सामन्ती तथा पितृसत्तात्मक समाज के समर्थक आते हैं, जो वड़े पैमाने के उद्योग तथा विश्व व्यापार द्वारा तथा पूंजीवादी समाज द्वारा, जिसे इन दो ने जन्म दिया है, नष्ट किया जा चुका है या नित्यप्रति किया जा रहा है। वर्तमान समाज के मौजूदा कष्टों से यह समूह यह निष्कर्ष निकालता है कि सामन्ती तथा पितृसत्तात्मक समाज की फिर से स्थापना होनी चाहिए क्योंकि वह इन कष्टों से मुक्त था। उनके सारे प्रस्ताव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इसी ओर लक्षित हैं। सर्वहारा के दुख-कष्टों के लिए उसकी दिखाऊ सहानुभूति तथा उन पर मगर के आंसू वहाने के वावजूद प्रतिक्रियावादी समाजवादियों के इस समूह का कम्युनिस्ट डटकर विरोध करेंगे क्योंकि—

१. वे ऐसी चीज़ की कामना करते हैं जो सर्वथा असम्भव है;

२. वे अभिजात वर्ग, शिल्प संघों के उस्तादों तथा मैनुफ़ेक्चररों और उनके अनुचरों, निरंकुश अथवा सामन्ती राजाओं, पदाधिकारियों, सैनिकों, पादरियों के राज को, ऐसे समाज को फिर से क़ायम करना चाहते हैं, जो वर्तमान समाज की ख़ामियों से मुक्त होने के वावजूद अपने ही अनेकानेक कष्टों से ग्रस्त था और जिसमें उत्पीड़ित मज़दूरों को कम्युनिस्ट ढंग के संगठन से मुक्त करने की कोई सम्भावना नहीं थी;

३. वे अपने असल इरादों को हमेशा उस समय प्रकाश में ले आते हैं

जब सर्वहारा क्रान्तिकारी तथा कम्युनिस्ट बन जाता है; उस दशा में वे तुरन्त सर्वहारा के विरुद्ध हमेशा पूंजीपति वर्ग के साथी बन जाते हैं।

दूसरा समूह वर्तमान समाज के पक्षधरों को लेकर बना है; इस समाज की व्याधियों ने, जो उसके अवश्यम्भावी परिणाम हैं, इन लोगों में उसके अस्तित्व के लिए चिन्ता पैदा कर दी है। वे इस चीज़ के लिए प्रयत्नशील हैं कि वर्तमान समाज से जुड़ी हुई व्याधियों का अन्त कर इस समाज को अक्षुण्ण रखा जाये। इस के लिए उनमें से कुछ विविध मंगल-कल्याणकारी प्रस्ताव पेश करते हैं जबकि दूसरे विराट सुधार प्रणालियों की वकालत करते हैं जो समाज के पुनर्गठन के बहाने वर्तमान समाज की आधारशिलाओं को और इस तरह स्वयं समाज को क़ायम रखेंगी। कम्युनिस्टों को इन पूंजीवादी समाजवादियों का निरन्तर विरोध करना होगा क्योंकि वे कम्युनिस्टों के दुश्मनों के हितार्थ काम करते हैं तथा उस समाज की रक्षा कर रहे हैं जिसे कम्युनिस्ट नष्ट करने के लिए कटिबद्ध हैं।

आख़िर में, तीसरा समूह जनवादी समाजवादियों को लेकर बना है, जो कम्युनिस्टों की ही तरह प्रश्न* में उल्लिखित कार्रवाइयों को अंशतः चाहते हैं, परन्तु वे कम्युनिज़्म में संक्रमण के साधन के रूप में नहीं, वरन वर्तमान समाज की दरिद्रता तथा दुख-कष्टों का अन्त करने के साधन के रूप में चाहते हैं। ये जनवादी समाजवादी या तो सर्वहारा हैं जिन्हें अपने वर्ग की मुक्ति की अवस्थाओं के बारे में पर्याप्त ज्ञान नहीं हुआ है, अथवा वे निम्न-पूंजीपति वर्ग के, उस वर्ग के प्रतिनिधि हैं जिसके हित जनवाद के हासिल होने तथा उससे सम्बन्धित समाजवादी कार्रवाइयों के पूर्ण होने तक कई मामलों में सर्वहारा वर्ग के हित के सदृश रहते हैं। अतः कार्रवाई करने के मौक़ों पर कम्युनिस्टों को जनवादी समाजवादियों के साथ समझौता करना पड़ेगा तथा जब सम्भव हो, उनके साथ कम से कम कुछ समय तक, जब तक ये समाजवादी सत्ताधारी पूंजीपति वर्ग की चाकरी नहीं करने लगते तथा कम्युनिस्टों पर प्रहार नहीं करते, सामान्यतया एक मिली-जुली नीति का पालन करना पड़ेगा। यह स्पष्ट है कि यह समान कार्रवाई उनके साथ मतभेदों पर बहस करने की सम्भावना नहीं मिटाती।

---

*यहां पाण्डुलिपि में खाली जगह है। प्रश्न १८ का उत्तर देखें। —सं०

प्रश्न २५ : आज की अन्य पार्टियों के प्रति कम्युनिस्टों का क्या रुख़ है ?

उत्तर : यह रुख़ देश-देश के अनुसार भिन्न-भिन्न है। — इंगलैंड, फ़्रांस तथा बेल्जियम में, जहां पूंजीपति वर्ग का शासन है, फ़िलहाल कम्युनिस्टों और विभिन्न जनवादी पार्टियों के समान हित हैं, ये जनवादी समाजवादी कार्रवाइयों में, जिनकी वे इस समय सर्वत्र वकालत कर रहे हैं, कम्युनिस्टों के लक्ष्यों के जितने समीप आते हैं, अर्थात् वे सर्वहारा वर्ग के हितों की जितनी अधिक स्पष्टता तथा जितनी अधिक निश्चितता के साथ रक्षा करेंगे और जितना अधिक वे सर्वहारा वर्ग का सहारा लेंगे, उनके हितों का यह साम्य उतना ही अधिक होगा। उदाहरण के लिए इंगलैंड में चार्टिस्ट, जो सब मज़दूर हैं, जनवादी निम्न-पूंजीपतियों अथवा तथाकथित उग्रवादियों की तुलना में कम्युनिस्टों के कहीं समीप हैं।

अमरीका में जहां जनवादी संविधान प्रचलित हो चुका है, कम्युनिस्टों को उस पार्टी का पक्ष लेना होगा जो इस संविधान को पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध लागू करेगा तथा उसे सर्वहारा वर्ग के हित में इस्तेमाल करेगा, अर्थात् उन्हें राष्ट्रीय कृषि सुधारकों का पक्ष लेना होगा।

स्विट्ज़रलैंड में उग्रवादी हालांकि अब भी बहुत ही मिली-जुली पार्टी के लोग हैं, फिर भी केवल वे ही ऐसे लोग हैं जिनके साथ कम्युनिस्ट समझौता कर सकते हैं, और इन उग्रवादियों के बीच वोद तथा जेनेवा के उग्रवादी सबसे प्रगतिशील हैं।

आख़िर में **जर्मनी** आता है, जहां पूंजीपति वर्ग तथा राजतंत्र के बीच निर्णायक संघर्ष अभी केवल दूर है। परन्तु कम्युनिस्ट चूंकि पूंजीपति वर्ग द्वारा सत्ता धारण करने के बाद ही उसके विरुद्ध निर्णायक संघर्ष करने के भरोसे नहीं बैठे रह सकते, इसलिए वह कम्युनिस्टों के ही हित में है कि वे पूंजीपति वर्ग को सत्ता शीघ्रातिशीघ्र हासिल करने में मदद दें ताकि उसे जितनी जल्दी सम्भव हो, उलटा जा सके। अतः कम्युनिस्टों को हमेशा सरकारों के ख़िलाफ़ उदारपंथी पूंजीपतियों का साथ देना चाहिए परन्तु इस बारे में सतर्क रहना चाहिए कि वे पूंजीपति वर्ग की ही तरह आत्म-वंचना के शिकार न बनें अथवा पूंजीपति वर्ग की मन को लुभानेवाली इन

घोषणाओं पर विश्वास न करने लगें कि उसकी विजय से सर्वहारा के लिए लाभदायी फल निकलेंगे। पूंजीपति वर्ग की विजय से कम्युनिस्टों के लिए मात्र ये लाभ हैं:

१. विभिन्न रियायतें जो कम्युनिस्टों के लिए अपने सिद्धान्तों की रक्षा, उन पर विचार-विमर्श तथा उनके प्रसार को अधिक सुगम बनायेंगी तथा इस प्रकार सर्वहारा का एक ठोस, संघर्षशील तथा सुसंगठित वर्ग में एकीकरण किया जा सकेगा; और २. यह पक्का हो जायेगा कि जिस दिन निरंकुश सरकारों का तख़्ता उलट दिया जायेगा, उस दिन से पूंजीपतियों तथा सर्वहाराओं के बीच संघर्ष की बारी आ जायेगी। उस दिन के उपरान्त कम्युनिस्टों की पार्टी नीति वही होगी जो उन देशों में है जहां पूंजीपति वर्ग अभी सत्तारूढ़ है।

एंगेल्स द्वारा
अक्तूबर–नवम्बर १८४७ में लिखित।
पहली बार १९१४ में
पृथक् संस्करण के
रूप में प्रकाशित।

टिप्पणियां

[1] यहां इशारा फ़्रांस में १८४८ की फ़रवरी क्रान्ति की ओर है। – ६

[2] यहां इशारा पेरिस के सर्वहाराओं के २३–२६ जून विद्रोह की ओर है। जून विद्रोह यूरोप में १८४८–१८४६ की क्रान्ति के विकास का चरम विन्दु था। – ६

[3] १८७१ का पेरिस कम्यून – पेरिस में सर्वहारा क्रान्ति द्वारा स्थापित मज़दूर वर्ग की क्रान्तिकारी सरकार, इतिहास में सर्वहारा अधिनायकत्व के निर्माण का पहला अनुभव। पेरिस कम्यून १८ मार्च से २८ मई १८७१ तक, ७२ दिनों तक टिका रहा। – १०

[4] उपरोक्त संस्करण १८६६ में प्रकाशित हुआ। १८८८ के अंग्रेज़ी संस्करण के लिए एंगेल्स द्वारा लिखी गयी भूमिका में "घोषणापत्र" के इस रूसी अनुवाद के प्रकाशन की तारीख़ भी सही नहीं है। (प्रस्तुत संस्करण का पृष्ठ १७ देखिये) – ११

[5] "कोलोकोल" (घंटा) – रूसी क्रान्तिकारी-जनवादी अख़बार, क्रान्तिकारी जनवादी अ० इ० हर्ज़ेन तथा न० प० ओगार्योव द्वारा १८५७ से १८६७ तक प्रकाशित। १८६५ तक वह लन्दन में तथा उसके बाद जेनेवा में छपता रहा। – ११

[6] यहां इशारा उस स्थिति की ओर है जो १ मार्च १८८१ को "नरोद्नाया वोल्या" (जन-इच्छा) के सदस्यों द्वारा सम्राट अलेक्सांद्र द्वितीय की हत्या के वाद उत्पन्न हुई थी। उसके बाद राजसिंहासन पर बैठनेवाले अलेक्सांद्र तृतीय ने क्रान्तिकारी प्रदर्शनों तथा "नरोद्नाया वोल्या" की (नरोद्वादी-आतंकवादियों की गुप्त राजनीतिक संस्था) सम्भावित क्रान्तिकारी कार्रवाइयों से भयभीत होकर गातचिना में (पीटर्सबर्ग के समीप स्थित ज़ार का निवास) शरण ली थी।–१२

[7] डारविन, चार्ल्स-राबर्ट (१८०९–१८८२) – ब्रिटिश वैज्ञानिक, भौतिकवादी जीव-विज्ञान के जन्मदाता। विपुल वैज्ञानिक सामग्री का उपयोग करके डारविन ने सबसे पहले सजीव प्रकृति के विकास के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने सिद्ध किया कि जैव विश्व का विकास सरल रूपों से अधिक संजटिल रूपों की ओर अग्रसर हुआ तथा पुराने रूपों के विलोप की तरह नये रूपों का प्रादुर्भाव प्राकृतिक-ऐतिहासिक विकास का फल है।

डारविन के सिद्धान्त का मुख्य विचार प्राकृतिक तथा कृत्रिम वरण के माध्यम से स्पीशीज़ की उत्पत्ति के विषय में उनकी शिक्षा में निहित है। डारविन ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि किसी भी जीव में परिवर्तनीयता तथा आनुवंशिकता होती है, और जो परिवर्तन किसी प्राणी या पौधे को अस्तित्व के लिए संघर्ष में मदद देते हैं, वे सुदृढ़ हो जाते हैं तथा जैव और वनस्पति के नये रूपों के प्रादुर्भाव को निर्धारित करते हैं। इस प्रस्थापना के मुख्य सिद्धान्तों तथा तर्कों का वर्णन «*The Origin of Species*» (१८५९) नामक पुस्तक में किया गया है।–१४

[8] देखिये टिप्पणी १

[9] प्रूदों, पियेर-जोसेफ़ (१८०९–१८६५) – फ़्रांसीसी पत्रकार, अर्थशास्त्री तथा समाजशास्त्री; निम्न-पूंजीपति वर्ग के विचारधारा निरूपक तथा अराजकतावाद के संस्थापकों में से एक। प्रूदों छोटे निजी स्वामित्व की

अक्षुण्णता का स्वप्न देखते थे और बड़े पूंजीवादी स्वामित्व की निम्न-पूंजीवादी दृष्टिकोण से आलोचना करते थे। उन्होंने ऐसे "जन-बैंक" का संगठन करने का प्रस्ताव किया जो "मुक्त ऋण" के माध्यम से मज़दूरों को अपने उत्पादन साधन उपलब्ध करने में तथा दस्तकार बनने में मदद दे। प्रूदों ने विशेष "विनिमय-बैंकों" के निर्माण का प्रतिक्रियावादी कल्पनावादी सिद्धान्त पेश किया जो मेहनतकश लोगों द्वारा उत्पादित माल की कथित "न्यायपूर्ण बिक्री" सुनिश्चित करते तथा जिनका उत्पादन के औज़ारों तथा साधनों के पूंजीवादी स्वामित्व पर कोई प्रभाव न पड़ता। प्रूदों सर्वहारा वर्ग की ऐतिहासिक भूमिका नहीं समझते थे। वर्ग संघर्ष, सर्वहारा क्रान्ति तथा सर्वहारा अधिनायकत्व के प्रति उनका रुख़ नकारात्मक था। वह राज्य की आवश्यकता को अराजकतावादी दृष्टिकोण से नकारते थे। मार्क्स तथा एंगेल्स ने पहले इंटरनेशनल पर अपने विचार थोपने के प्रूदोंपंथियों के प्रयत्नों के विरुद्ध सतत संघर्ष किया। कार्ल मार्क्स ने अपनी कृति "दर्शन की दरिद्रता" में प्रूदोंपंथ की कड़ी आलोचना की। – १६

[10] **लासालपंथी** – जर्मन निम्न-पूंजीवादी समाजवादी फ़र्दिनांद लासाल के अनुयायी तथा उनके विचारों के समर्थक, आम जर्मन मज़दूर संघ के सदस्य, जिसकी स्थापना १८६३ में लाइपज़िग में मज़दूर संघों की कांग्रेस में हुई थी। आम जर्मन मज़दूर संघ के प्रथम अध्यक्ष लासाल थे, जिन्होंने उसका कार्यक्रम तथा उसकी कार्यनीति के मूल सिद्धान्त तैयार किये थे। मज़दूर वर्ग की आम राजनीतिक पार्टी की स्थापना निस्सन्देह जर्मनी में मज़दूर आन्दोलन के विकास में एक नया क़दम था। परन्तु सिद्धान्त तथा नीति के बुनियादी प्रश्नों पर लासाल तथा उनके अनुयायियों ने अवसरवादी रुख़ अपनाया। लासालपंथियों ने सामाजिक प्रश्न के समाधान के हेतु प्रशियाई राज्य का उपयोग करना सम्भव माना तथा प्रशा के सरकार के प्रधान बिस्मार्क से बातचीत करने की कोशिश की। कार्ल मार्क्स तथा फ़्रेडरिक एंगेल्स ने लासालपंथियों के सिद्धान्त, कार्य-नीति तथा संगठनात्मक उसूलों को जर्मन मज़दूर आन्दोलन में अवसरवादी प्रवृत्तियां बताकर उनकी तीखी आलोचना की। – १६

[11] ओवेनपंथी – ब्रिटिश कल्पनावादी समाजवादी रावर्ट ओवेन (१७७१–१८५८) के अनुयायी तथा उनके विचारों के समर्थक। रावर्ट ओवेन ने पूंजीवादी व्यवस्था की घोर आलोचना की लेकिन पूंजीवाद के अन्तर्विरोधों की वास्तविक जड़ों को प्रकाश में लाने में असफल रहे क्योंकि उनका विश्वास था कि सामाजिक विषमता का मुख्य कारण स्वयं उत्पादन की पूंजीवादी प्रणाली नहीं वरन लोगों की अपर्याप्त शिक्षा है। उन्होंने सोचा कि यह विषमता ज्ञान के प्रसार तथा सामाजिक सुधारों के ज़रिये मिटायी जा सकती है। उन्होंने इस प्रकार के सुधारों का एक विराट कार्यक्रम पेश किया। उन्होंने भावी "विवेक-सम्मत" समाज की छोटे-छोटे स्वायत्तशासी कम्यूनों के एक स्वतंत्र संघ के रूप में कल्पना की। परन्तु अपने विचारों को यथार्थ में परिणत करने की उनकी सारी चेष्टाएं विफल रहीं।– १८

[12] फ़ूरियेपंथी – फ़्रांस के कल्पनावादी समाजवादी शार्ल फ़ूरिये (१७७२–१८३७) के अनुयायी तथा उनके विचारों के समर्थक। फ़ूरिये पूंजीवादी समाज की कटु आलोचना करते थे। उन्होंने एक ऐसे भावी "सामंजस्यपूर्ण" मानव समाज का वर्णन किया जो मानवीय भावावेगों के संज्ञान पर आधारित होगा। उन्होंने यह मानते हुए कि आदर्श फ़ालांस्टरों (मज़दूर संघों) के, जिनमें स्वैच्छिक तथा आकर्षक श्रम मानव आवश्यकता वन जायेगा, शान्तिमय प्रचार के माध्यम से भावी समाजवादी समाज में संक्रमण हासिल किया जा सकता है, वलपूर्वक क्रान्ति का विरोध किया। परन्तु फ़ूरिये निजी स्वामित्व मिटाना नहीं चाहते थे, उनके फ़ालांस्टरों में धनवानों तथा ग़रीबों दोनों का अस्तित्व वना रहता।– १८

[13] काबे, एत्येन (१७८८–१८५६) – फ़्रांसीसी निम्न-पूंजीवादी पत्रकार, कल्पनावादी कम्युनिज़्म के प्रमुख प्रतिनिधि। वह यह मानते थे कि पूंजीवादी शासन व्यवस्था की त्रुटियां समाज के शान्तिपूर्ण कायाकल्प के माध्यम से दूर की जा सकती हैं। उन्होंने "इकारिया की यात्रा" (१८४०) नामक पुस्तक में अपने विचार प्रस्तुत किये तथा अमरीका में एक

कम्युनिस्ट समुदाय स्थापित कर अपने विचार क्रियान्वित करने का प्रयास किया परन्तु यह प्रयोग पूरी तरह विफल हो गया।

वाइटलिंग, विल्हेल्म (१८०८–१८७१)–जर्मन मज़दूर आन्दोलन के आरम्भिक दौर के एक प्रमुख राजनीतिज्ञ, कल्पनावादी "समतावादी" कम्युनिज़्म के एक सिद्धान्तकार। एंगेल्स की राय में वाइटलिंग ने "जर्मन सर्वहारा वर्ग के पहले स्वतंत्र सैद्धान्तिक आन्दोलन में" ठोस भूमिका अदा की।– १८

[14] देखिये टिप्पणी ७

[15] देखिये टिप्पणी ३

[16] देखिये टिप्पणी २

[17] यहां इशारा प्रशा की सरकार द्वारा संगठित उकसावापूर्ण मुक़दमे (४ अक्तूबर से १२ नवम्बर, १८५२) की ओर है। अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट संगठन के, कम्युनिस्ट लीग के ११ सदस्यों पर "राज्य-द्रोह" करने के लिए मुक़दमा चलाया गया। सात को झूठी दस्तावेज़ों तथा झूठी शहादत के आधार पर तीन से सात वर्ष तक का कठोर दुर्गकारावास का दंड दिया गया।– २५

[18] देखिये कार्ल मार्क्स की कृति *«General Charter of the International Alliance of Workers».* – २६

[19] देखिये टिप्पणी १३

[20] **कांग्रेसीय पोलैंड**–यह पोलैंड के उस भाग का नाम था जो १८१४–१८१५ में वियेना कांग्रेस के निर्णयानुसार पोशिल राज्य के नाम से रूस के हिस्से में आ गया।– २९

[21] **नेपोलियन तृतीय (लूई बोनापार्त)** (१८०८–१८७३)–नेपोलियन प्रथम का भतीजा, द्वितीय जनतंत्र का राष्ट्रपति (१८४८–१८५१); फ़्रांसीसी सम्राट (१८५२–१८७०)।

विस्मार्क, ओटो एडवर्ड लियोपोल्ड (१८१५–१८९८)–प्रशियाई तथा जर्मन राजनेता तथा कूटनीतिज्ञ। वैदेशिक तथा गृहनीति में ज़मींदारों तथा बड़े पूंजीपतियों के हितों से प्रेरित हुए। अपहारी युद्धों तथा सफल कूटनीतिक चालों के ज़रिये वह १८७१ में प्रशा के नेतृत्व में जर्मनी के एकीकरण में सफल हो गये। १८७१ से १८९० तक जर्मन साम्राज्य का चांसलर रहे।

"अपनी पूर्ववर्ती क्रान्तियों की तरह १८४८ की क्रान्ति के भी विचित्र साथी तथा उत्तराधिकारी थे। ठीक वे ही लोग, जिन्होंने उसे कुचला, कार्ल मार्क्स के शब्दों में, उसकी वसीयत के निष्पादक बन गये। लूई नेपोलियन एकीकृत तथा स्वतंत्र इटली का निर्माण करने के लिए वाधित हुए। बिस्मार्क जर्मनी में एक तरह बलात् सत्ता-परिवर्तन करने और हंगरी को आज़ादी लौटाने के लिए विवश हुए..." एंगेल्स, *«Preface to the English edition of Situation of the Working Class in Britain»*. – ३०

[22] यहां इशारा उन पोलिश इलाक़ों में राष्ट्रीय मुक्ति विद्रोह की ओर है जो रूसी साम्राज्य के भाग थे। यह विद्रोह ज़ारशाही सेनाओं ने निर्दयतापूर्वक कुचल दिया था। विद्रोह के कुछ नेताओं को उम्मीद थी कि पश्चिमी सरकारें हस्तक्षेप करेंगी परन्तु उन्होंने अपने को कूटनीतिक कार्रवाइयों तक सीमित रखा और वस्तुतः विद्रोहियों के साथ गद्दारी की। – ३०

[23] पोप पीयस नवें को, जो १८४६ में परमधर्माध्यक्षीय पद के लिए निर्वाचित हुए, उस समय "उदारतावादी" माना जाता था परन्तु समाजवाद के प्रति उनका रुख़ रूसी ज़ार निकोलाई प्रथम से कम शत्रुतापूर्ण नहीं था, जो १८४८ की क्रान्ति से पहले ही यूरोपीय पुलिसमैन की भूमिका अदा कर चुके थे। आस्ट्रियाई साम्राज्य के चांसलर तथा पूरे यूरोपीय प्रतिक्रियावाद के माने हुए नेता मेटर्निख उस समय इतिहासकार तथा फ़्रांसीसी मंत्री गीज़ों के ख़ास तौर पर समीप थे जो बड़े वित्तीय तथा औद्योगिक पूंजीपति वर्ग के सिद्धान्तकार तथा सर्वहारा के घोर

शत्रु थे। प्रशियाई सरकार की मांग पर गीज़ों ने मार्क्स को पेरिस से निकाल दिया। जर्मन पुलिस जर्मनी में ही नहीं, वरन फ़्रांस और बेल्जियम, यहां तक कि स्विट्ज़रलैंड में भी कम्युनिस्टों का पीछा करती रही तथा उनके प्रचार की राह में बाधाएं खड़ी करने के लिए सब तरह के हथकंडे अपनाती रही। – ३४

[24] हेक्स्ट्हाउज़ेन, अगस्त (१७९२–१८६६) – प्रशियाई सामन्त, निकोलाई प्रथम ने उन्हें रूस आकर कृषि व्यवस्था तथा रूसी किसानों के जीवन के बारे में अध्ययन करने की अनुमति दी थी (१८४३–१८४४)। रूस में भूमि सम्बन्धों में सामुदायिक व्यवस्था के अवशेषों पर कृति के रचयिता। – ३५

[25] मारेर, गेओर्ग लुडविग (१७९०–१८७२) – जर्मन इतिहासकार, प्राचीन तथा मध्ययुगीन जर्मनी की सामाजिक व्यवस्था के अध्ययनकर्त्ता; मध्ययुगीन कम्यून के इतिहास के अध्ययन कार्य में महत्त्वपूर्ण योग दिया। – ३५

[26] मौर्गन, ल्यूइस हेनरी (१८१८–१८८१) – अमरीकी नृशास्त्री, पुरातत्त्ववेत्ता तथा इतिहासकार। अमरीकी इंडियनों की सामाजिक व्यवस्था तथा दैनंदिन जीवन के अध्ययन के दौरान प्राप्त विपुल नृशास्त्रीय सामग्री के आधार पर उन्होंने आदिम सामुदायिक व्यवस्था के मुख्य रूप में गोत्र के विकास का सिद्धान्त निरूपित किया। उन्होंने वर्गपूर्व समाज के इतिहास का कालक्रम निर्धारण करने का प्रयत्न किया। मार्क्स और एंगेल्स ने मौर्गन की कृतियों का ऊंचा मूल्यांकन किया। मार्क्स ने उनकी पुस्तक «*Ancient Society*» (१८७७) का एक विस्तृत वस्तुसार तैयार किया। एंगेल्स अपनी पुस्तक «*Origin of Family, Private Property and State*» में मौर्गन द्वारा एकत्र की गयी तथ्यात्मक सामग्री की चर्चा करते हैं। – ३५

[27] धार्मिक अभियान – ११वीं तथा १३वीं शताब्दियों में पूर्व में पश्चिम यूरोपीय सामन्तों तथा सरदारों के उन सैनिक-उपनिवेशवादी अभियानों

का नाम है जो येरूशलम तथा अन्य "तीर्थस्थानों" को मुस्लिम शासन से मुक्त करने के धार्मिक नारे के साथ चलाये गये थे। – ३९

[28] मार्क्स तथा एंगेल्स ने अपनी बाद की कृतियों में "श्रम का मूल्य" तथा "श्रम का दाम" शब्दों के स्थान पर मार्क्स द्वारा प्रचलित इन अधिक सटीक शब्दों का उपयोग किया – "श्रम शक्ति का मूल्य" तथा "श्रम शक्ति का दाम"। – ४४

[29] यहां इशारा लम्पन-प्रोलेटारियट की ओर है ("लम्पन" शब्द जर्मन भाषा से लिया गया है जिसमें *Lumpen* का अर्थ "चीथड़े" होता है) – यानी वर्गविहीन तत्त्व, आवारा, भिखारी, चोर आदि।

संगठित राजनीतिक संघर्ष करने की अक्षमता, नैतिक अस्थिरता, दुस्साहसिकतावाद की प्रवृत्ति के कारण पूंजीपति उन्हें हड़ताल-तोड़कों, कत्लेआम करनेवाले गिरोहों के रूप में इस्तेमाल करने में सफल रहते हैं। – ४९

[30] यहां इशारा निर्वाचन क़ानून में सुधार की ओर है जिसका विधेयक जनता के दवाव में हाउस आफ़ कामन्स ने १८३१ में पास किया था तथा जिसे अन्ततः हाउस आफ़ लार्ड्स ने जून १८३२ में स्वीकृति प्रदान कर दी थी। यह सुधार भूमिधारी तथा वित्तीय अभिजात वर्ग की राजनीतिक इजारेदारी के ख़िलाफ़ लक्षित था। उसने औद्योगिक पूंजीपति वर्ग के लिए संसद के द्वार खोल दिये। सर्वहाराओं तथा निम्न-पूंजीपतियों को, जो सुधार के लिए संघर्ष की मुख्य शक्ति थे, उदारपंथी पूंजीपतियों ने धोखा दे दिया तथा उन्हें निर्वाचन अधिकार प्रदान नहीं किये। – ६४

[31] फ़ांसीसी लेजिटिमिस्ट – १८३० में सत्ताच्युत बूर्बों राजवंश के पक्षधर। यह राजवंश बड़े-बड़े वंशानुगत सामन्तों के हितों का प्रतिनिधित्व करता था। सत्तारूढ़ आर्लियां राजवंश, जो वित्तीय प्रभुओं और बड़े पूंजीपतियों का सहारा लेता था, के विरुद्ध संघर्ष में लेजिटिमिस्टों का एक हिस्सा यह दिखाते हुए कि वह पूंजीपति वर्ग द्वारा किये जानेवाले शोषण के विरुद्ध मेहनतकश जनता का रक्षक है, अक्सर सामाजिक नारेबाज़ी का सहारा लेता था।

"तरुण इंगलैंड" – ब्रिटिश राजनीतिज्ञों तथा साहित्यकारों का एक दल जो टोरी पार्टी से सम्बन्धित था; यह १९वीं शताब्दी के पांचवें दशक के शुरू में स्थापित हुआ था। पूंजीपति वर्ग की बढ़ती हुई आर्थिक तथा राजनीतिक शक्ति के प्रति सामन्ती अभिजात वर्ग के बढ़ते हुए असन्तोष को व्यक्त करते हुए "तरुण इंगलैंड" के नेता शब्दाडम्बरपूर्ण छल का उपयोग करते थे ताकि मज़दूर वर्ग को अपने प्रभाव में लाया जा सके और उसे पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध अपने संघर्ष में इस्तेमाल किया जा सके। – ६५

[32] **सीसमांदी, जान शार्ल लेओनार सीमांद दे** (१७७३–१८४२) – स्विस अर्थशास्त्री, इतिहासकार तथा निम्न-पूंजीवादी समाजवाद के प्रतिनिधि। सीसमांदी बड़े पूंजीवादी उत्पादन की प्रगतिशील प्रवृत्तियों को नहीं समझते थे, उन्होंने पुरानी परम्पराओं तथा प्रणालियों में, उद्योग के शिल्प संगठनों तथा पितृसत्तात्मक कृषि में ऐसे आदर्श उदाहरण ढूंढ़ने की कोशिश की जो परिवर्तित आर्थिक परिस्थितियों के बिल्कुल प्रतिकूल थे। – ६७

[33] **ग्रून, कार्ल** (१८१७–१८८७) – निम्न-पूंजीवादी जर्मन प्रचारक। – ७२

[34] **बाब्योफ़, ग्राक्ख** (असल नाम फ़्रांसुआ नायल) (१७६०–१७९७) – फ़्रांसीसी क्रान्तिकारी, काल्पनिक कम्युनिज्म के प्रसिद्ध प्रतिनिधि। सशस्त्र विद्रोह तैयार करने के लिए एक गुप्त संस्था के संगठनकर्त्ता। विद्रोह का उद्देश्य था जनता के हितों की रक्षा करने के लिए क्रान्तिकारी अधिनायकत्व की स्थापना करना। षड्यंत्र का पता चल गया तथा २७ मई, १७९७ को बाब्योफ़ को फांसी दे दी गयी। – ७३

[35] **सेंट साइमन, आंरी क्लाद** (१७६०–१८२५) – फ़्रांसीसी कल्पनावादी-समाजवादी। उन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था की आलोचना की तथा उसके स्थान पर साहचर्य के सिद्धान्तों पर आधारित समाज की प्रतिष्ठापना करने का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। उनका विश्वास था कि नये समाज में हर एक को काम करना पड़ेगा तथा व्यक्तियों की भूमिका उनकी श्रम

उपलब्धियों के अनुरूप होगी। उन्होंने उद्योग तथा विज्ञान के मध्य सहयोग का, केन्द्रीकृत तथा नियोजित उत्पादन का विचार प्रस्तुत किया। परन्तु सेंट-साइमन ने निजी स्वामित्व और पूंजी पर ब्याज को ज़रा भी क्षति नहीं पहुंचायी; राजनीतिक संघर्ष तथा क्रान्ति के विषय में उनका नकारात्मक दृष्टिकोण था। सर्वहारा वर्ग के ऐतिहासिक मिशन को समझने में विफल होने के कारण उनका विश्वास था कि सरकारी सुधारों तथा एक नये धर्म की भावना में समाज की नैतिक शिक्षा के फलस्वरूप वर्ग विरोधों का अन्त हो जायेगा। (फ़ूरिये तथा ओवेन पर टिप्पणियां ११ और १२ देखिये) – ७४

[36] चार्टिज्म (charter) – ब्रिटिश मज़दूरों का आम क्रान्तिकारी आन्दोलन जिसे उनकी आर्थिक दुर्दशा तथा राजनीतिक अधिकाराभाव ने जन्म दिया। आन्दोलन उन्नीसवीं शताब्दी के चौथे दशक के अंत में आम सभाओं तथा जलूसों के साथ शुरू हुआ तथा बीच-बीच में रुकते हुए छठे दशक के आरम्भ तक चला। – ७७

[37] यहां इशारा *«La Réforme»* (सुधार) (पेरिस, १८४३–१८५०) के समर्थकों की ओर है, जो जनतंत्र की स्थापना तथा जनवादी और सामाजिक सुधारों का समर्थन करते थे। – ७७

[38] लेद्रू-रोलें, अलेक्सांद्र ओग्यूस्त (१८०७–१८७४) – फ़ांसीसी पत्रकार तथा राजनीतिज्ञ, निम्न-पूंजीवादी जनवादियों के एक नेता, *«La Réforme»* समाचारपत्र के सम्पादक, १८४८ में अस्थायी सरकार के सदस्य।

ब्लां, लूई (१८११–१८८२) – फ़्रांस के निम्न-पूंजीवादी समाजवादी, इतिहासकार, १८४८–१८४९ की क्रान्ति के नेताओं में से एक; पूंजीपति वर्ग से मेल-मिलाप की वकालत की। – ७८

[39] पोलिश क्रान्तिकारी जनवादी विद्रोह के मुख्य प्रेरणादाता थे जिसकी फ़रवरी १८४६ में तैयारी की गयी थी। उसका उद्देश्य पोलैंड की राष्ट्रीय मुक्ति प्राप्त करना था। – ७९

[40] "कम्युनिज़्म के सिद्धान्त" कृति कम्युनिस्ट लीग के कार्यक्रम का मसविदा है। कम्युनिस्ट लीग की २९ नवम्बर से ८ दिसम्बर, १८४७, तक हुई दूसरी कांग्रेस में मार्क्स तथा एंगेल्स को लीग का घोषणापत्र के रूप में कार्यक्रम तैयार करने का काम सौंपा गया। "कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र" लिखते समय मार्क्सवाद के संस्थापकों ने "कम्युनिज़्म के सिद्धान्त" में प्रस्तुत कई प्रस्थापनाओं का उपयोग किया। – ८३

[41] प्रश्न २२ और २३ के उत्तरों की जगह पाण्डुलिपि में "वही" शब्द लिखा हुआ है। इसका स्पष्टतया उत्तर वही होना चाहिए जिसे कम्युनिस्ट लीग के कार्यक्रम के आरम्भिक मसविदे में सूत्रबद्ध किया गया है, जो हमें प्राप्त नहीं है। – १०२

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये:

प्रगति प्रकाशन,
२१, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

प्रगति प्रकाशन के
आगामी प्रकाशन

का० मार्क्स। मज़दूरी और पूंजी

यह पुस्तक मार्क्स के उन भाषणों का संग्रह है, जो उन्होंने १८४७ में ब्रसेल्ज़ में जर्मन मज़दूरों के सामने दिये थे। उनमें मार्क्स ने पूंजीवादी समाज के उत्पादन संबंधों का विश्लेषण किया है और राजनीतिक अर्थशास्त्र के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला है।

पुस्तक के अन्त में टिप्पणियां भी दी गयी हैं।

प्रगति प्रकाशन के

आगामी प्रकाशन

फ़्रे० एंगेल्स। वानर के नर बनने की प्रक्रिया में श्रम की भूमिका

इस कृति में एंगेल्स ने मनुष्य की शारीरिक रचना और मानव समाज के निर्माण में श्रम और उत्पादन औज़ारों की निर्णायक भूमिका पर प्रकाश डाला है।

पुस्तक तथ्यों से भरपूर है, जिनके आधार पर एंगेल्स ने अनेक गहन सैद्धान्तिक निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं।

पुस्तक के अन्त में टिप्पणियां भी दी गयी हैं।

К. Маркс, Ф. Энгельс

МАНИФЕСТ
КОММУНИСТИЧЕСКОЙ ПАРТИИ

На языке хинди